9 '2

मेरा जीवन व्रत

लेखक
आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

-: प्रकाशक :-

श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास, वेद विज्ञान मन्दिर
(वैदिक एवं आधुनिक भौतिक विज्ञान शोध संस्थान)
भागल-भीम, वाया-भीनमाल, जिला-जालोर (राज.) M. 09829148400
© 02969-220579 ई-मेल swamiagnivrat@yahoo.com

न्यास के संरक्षक

पूज्यपाद आचार्य स्वदेशजी महाराज
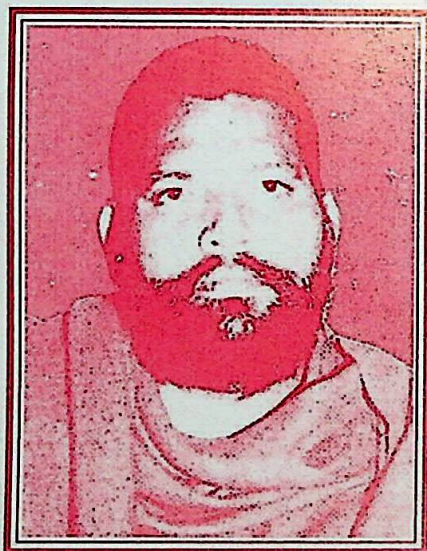
आचार्य श्री गुरु विरजानन्द आर्ष गुरुकुल वेद मन्दिर

वृन्दावन मार्ग, मथुरा (उ. प्र.)

दूरभाष : 0565 - 2406431

सहयोग राशि : श्रद्धा-सामर्थ्य के अनुसार सहयोग करें व करावें।

ओ३म्

मेरा जीवन व्रत

:: लेखक ::
आचार्य अग्निव्रत 'नैष्ठिक'
न्यास-प्रमुख

:: सम्पादक ::
अभिषेक आर्य
न्यास-मन्त्री

:: प्रकाशक ::
श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास, वेद विज्ञान मन्दिर
(वैदिक एवं आधुनिक भौतिक विज्ञान शोध संस्थान)
भागलभीम, भीनमाल-३४३०२९, जिला-जालोर (राज.)
ई-मेल- swamiagnivrat@yahoo.com
फोन नं. ०२९६९-२९२१०३ मो. ९८२९१४८४००

संस्करण : द्वितीय — सम्वत् २०६५
प्रतियां : २००० — सन् २००८

इस पुस्तक का छपाई का सम्पूर्ण व्यय न्यास-मन्त्री दानवीर श्री अभिषेक आर्य ने वहन किया है ।

ओ३म्

विषय-सूची

क्र. सं.	विषय	पृष्ठ सं.
1.	प्राक्कथन	3-11
2.	प्रार्थना	12
3.	संस्कृत गीतिका	13-14
5.	सम्पादकीय	15-18
5.	सत्य धर्म तथा कल्याणकारी विज्ञान की ओर	19-26
6.	अन्तर्वेदना ! भीष्म संकल्प	27-51
7.	वेद विज्ञान शोध प्रक्रिया	52
8.	निवेदन एवं स्पष्टीकरण	
9.	कुछ सम्मत्तियां	
10.	वेद विज्ञान अनुसंधान योजना	

ओ३म्

-: प्राक्कथन :-

वेदों के विषय में आर्यों का यह परम्परागत विश्वास रहा है कि वे मानव सृष्टि के प्रारम्भ में परम पिता परमात्मा द्वारा मनुष्य मात्र के कल्याण के लिए दिये हुए पवित्र ज्ञान भण्डार है, जिनमें मानव मात्र की वैयक्तिक, पारिवरिक, सामाजिक और राष्ट्रिय उन्नति तथा विश्व शान्ति के सूचक सब तत्व विद्यमान हैं ।

ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के "वेद विषय विचार" अध्याय में महर्षि दयानन्द सरस्वती वेदों के अवयव रूप चार विषय लिखते हैं- (१) एक विज्ञान अर्थात् सब पदार्थों का यथार्थ जानना, (२) दूसरा कर्म, (३) तीसरा उपासना, और (४) चौथा ज्ञान । 'विज्ञान' उसको कहते हैं जो कर्म, उपासना और ज्ञान इन तीनों से यथावत् उपयोग लेना और परमेश्वर से लेके तृणपर्यंत पदार्थों का साक्षात् बोध का होना और उनसे यथावत् उपयोग का करना, इससे यह विषय इन चारों में भी प्रधान है, क्योंकि इसी में वेदों का मुख्य तात्पर्य है । सो भी दो प्रकार का है-एक तो परमेश्वर का यथावत् ज्ञान और उसकी आज्ञा का बराबर पालन करना, और दूसरा यह है कि उसके रचे हुए सब पदार्थों के गुणों को यथावत् विचार के उनसे कार्य सिद्ध करना, अर्थात् ईश्वर ने कौन कौन पदार्थ किस-किस प्रयोजन के लिए रचे हैं और इन दोनों में से भी ईश्वर का जो प्रतिपादन है सो ही प्रधान है ।" इस विवरण को देखें तो "विज्ञान" शब्द सभी प्रकार की (आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक) विद्याओं को दर्शाता है ।

मनुष्य के सम्मुख दो लक्ष्य होते हैं- एक मृत्यु के पार जाना, दूसरा अमरत्व को प्राप्त करना । इसी को अभ्युदय व निःश्रेयस भी कहते हैं । ज्ञान, कर्म, उपासना का महत्त्व ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में निम्नलिखित यजुर्वेद के मन्त्र द्वारा बताया है -

ओ३म् विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभ्य१ँ सह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ।।

यजु. ४०/१४

जो मनुष्य विद्या और अविद्या के स्वरूप को साथ ही साथ जानता है वह अविद्या अर्थात् कर्मोपासना से मृत्यु को तर के विद्या अर्थात् यथार्थ ज्ञान से मोक्ष को प्राप्त होता है। कर्म और उपासना अविद्या इसलिए है कि यह बाह्य और आन्तर क्रिया विशेष नाम है, ज्ञान विशेष नहीं ।(यहाँ अविद्या, विद्या से भिन्न अर्थ लिया गया है न कि झूठी या उल्टी विद्या)

इसी से मन्त्र में कहा गया है कि बिना शुद्ध कर्म और परमेश्वर की उपासना के मृत्यु दुःख से पार कोई नहीं होगा, अर्थात् पवित्र कर्म, पवित्रोपासना और पवित्र ज्ञान ही से मुक्ति और अपवित्र मिथ्या भाषणादि कर्म पाषाणमूर्त्यादि की उपासना और मिथ्या ज्ञान से बंध होता है ।

ऋग्वेद (१/१२/१०) की ऋचा का भाष्य करते हुए ऋषि दयानन्द लिखते हैं कि "विद्वानों को इस संसार में मनुष्य जन्म पाकर वेद द्वारा सब विद्या प्रत्यक्ष करनी चाहिये, क्योंकि कोई भी विद्या पदार्थों के गुण और स्वभाव को प्रत्यक्ष किये बिना सफल नहीं हो सकती । पदार्थ विज्ञान के दृष्टिकोण से ऋग्वेद (२/१६/२) का उदाहरण प्रस्तुत है-इस ऋचा का भावार्थ इस प्रकार है-"जितना भी स्थूल पदार्थ मात्र जगत् में है वह समस्त विद्युत् के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है ।"

"महर्षि दयानन्द के वेदभाष्य की विशेषताएँ" पुस्तक की भूमिका में स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती विचार रखते हैं कि "उन्नीसवीं शती के इतिहास में महर्षि दयानन्द ही अकेले ऐसे आचार्य हैं, जिन्होंने विज्ञान (पदार्थ विद्या/भौतिक शास्त्र) और शिल्प के प्रति अनुराग प्रदर्शित किया और (आधुनिक) विज्ञान के बढ़ते हुए चरणों का स्वागत किया । उनकी दृष्टि में धर्म, दर्शन और विज्ञान सबका उद्देश्य एक है-ईश्वर के प्रति श्रद्धा, सत्य का समादर और लोक कल्याण की भावना । प्राचीन ऋषियों का भी यही दृष्टिकोण था। महर्षि का वेदभाष्य इन भावनाओं से ओतप्रोत है । ......सृष्टि का रचयिता प्रभु है और श्रुति का स्रोत भी वही है, अतः श्रुति के अभिप्राय में और सृष्टि सम्बन्धी ऋत और सत्य में कोई विरोध और संघर्ष नहीं होना चाहिये । ......अतः लोक-परलोक, संभूति-असंभूति, अभ्युदय-निःश्रेयस, परा-अपरा, ज्ञान-कर्म इन सबका समन्वय ही शाश्वत सत्य है । वह इस समन्वय का प्रतिपादक है ।"

वेदों की शिक्षायें सार्वभौम और सार्वकालिक है । विविध विद्याओं और विज्ञानों का भी मूल उनमें पाया जाता है । ज्ञान, कर्म और भक्ति, श्रद्धा और तर्क, त्याग और भोगवाद, व्यष्टिवाद और समष्टिवाद, धर्म और विज्ञान इत्यादि परस्पर विरूद्ध समझी जाने वाली बातों का युक्तियुक्त समन्वय और सर्वोपयोगी मध्यम मार्ग का यथार्थ प्रदर्शन, वेदों के द्वारा ही प्राप्त हो सकता है । महर्षि दयानन्द अपरा विद्या की अनिवार्यता दर्शाते हुए ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के "वेद विषय विचार" अध्याय में लिखते है-वेदों में दो विद्या है-एक अपरा, दूसरी परा । इनमें में से अपरा यह है कि जिससे पृथिवी और तृण से लेके

प्रकृति पर्यन्त पदार्थों के गुणों के ज्ञान से ठीक ठीक कार्य सिद्ध करना होता है और दूसरी परा कि जिससे सर्वशक्तिमान् ब्रह्म की यथावत् प्राप्ति होती है । यह परा विद्या अपरा विद्या से अत्यन्त उत्तम है क्योंकि अपरा का ही उत्तम फल परा विद्या है ।

सन् १६७५ में पूना में वेद विषय पर व्याख्यान देते हुए ऋषि दयानन्द वेद में ही सारी विद्याओं के मूल तत्वों का दिग्दर्शन मात्र है, ऐसा प्रतिपादित करते हैं । इस पर यदि कोई पूछे कि ईश्वर ने सब विद्याओं के मूल तत्व ही क्यों प्रकाशित किए और साद्यन्त विद्या और कला का विवरण क्यों नहीं किया ? तो वे कहते हैं कि जैसे ईश्वर ने मनुष्य मात्र के बुद्धि व्यापार का उसी तरह बुद्ध्युन्नति का भी अवकाश रखा । वे आगे कहते हैं कि वेद मन्त्र का सच्चा विनियोग करना अर्थात् बुद्धि-वैशद्य, बुद्धि-उन्नति, बुद्धि-प्रकाश, बुद्धि-सामर्थ्य को बढ़ाना, यह है । इस प्रकार का सामर्थ्य पहले आर्यों में था । वे एक ही मंत्र को लेकर जपने नहीं बैठते थे, परन्तु अनेक मंत्रों की मीमांसा करते थे । इसीलिए वारूणास्त्र, आग्नेयास्त्रादि उन्हें विदित थे अर्थात् पदार्थों को जान उनकी विशेष योजना वे करते थे ।

'नह्येषु प्रत्यक्षमस्त्यनृषेरतपसो वा......" इम निरूक्त वचन की व्याख्या में ऋषि दयानन्द ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के 'वेद विषय विचार' अध्याय में लिखते हैं- "वेदों के व्याख्यान करने के विषय में ऐसा समझना कि जब तक सत्य प्रमाण, सुतर्क, वेदों के शब्दों का पूर्णपर प्रकरणों, व्याकरण आदि वेदांगों, शतपथ आदि ब्राह्मणों, पूर्व मीमांसा आदि शास्त्रों और शाखान्तरों का यथावत् बोध न हो और परमेश्वर का अनुग्रह, उत्तम विद्वानों की शिक्षा, उनके संग से पक्षपात छोड़ के आत्मा की शुद्धि न हो, तथा महर्षि लोगों के किए व्याख्यानों को न देखें, तब तक वेदों के अर्थ का यथावत् प्रकाश मनुष्य के हृदय में नहीं होता ।" पठन-पाठन के प्रसंग में आर्ष पाठविधि के अन्तर्गत ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश और संस्कार विधि में सब वेदों को पढ़कर उपवेदों को पढ़ने का निर्देश दिया है। आयुर्वेद, धनुर्वेद, गांधर्ववेद और अर्थवेद ये चार उपवेद हैं । ऋषि दयानन्द ने शिल्प विद्या के अध्ययन-अध्यापन पर पर्याप्त बल दिया है, वे लिखते हैं- "अर्थवेद कि जिसको शिल्पविद्या कहते हैं, उसका पदार्थ-गुण-विज्ञान, क्रिया-कौशल, नानाविध पदार्थों का निर्माण, पृथिवी से लेके आकाश पर्यन्त तक की विद्या को सीख के अर्थ अर्थात् जो ऐश्वर्य को बढ़ाने वाला है, उस विद्या को सीख के दो वर्ष में ज्योतिषशास्त्र, सूर्य सिद्धान्तादि जिसमें बीज गणित, अंक, भूगोल, खगोल और भूगर्भ विद्या है इसको यथावत् सीखें । तत्पश्चात्

सब प्रकार की हस्तक्रिया, यंत्रकला आदि को सीखें ।"

डा. रामनाथ वेदालंकार अपनी "महर्षि दयानन्द के शिक्षा, राजनीति और कला कौशल सम्बन्धी विचार" पुस्तक में महर्षि के शिल्प विद्या के प्रति दृष्टिकोण को उद्घृत करते हैं- "स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रै विधेनेज्यया सुतैः ।

महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः ।। मनु.।।"

श्लोक की व्याख्या से ब्राह्मी तनु (ब्राह्मण शरीर) बताने के प्रसंग में "यज्ञैः" का अर्थ करते हुए "शिल्प विद्या विज्ञानादि यज्ञों के सेवन से" ऐसा निर्देश करते हैं । यह सूचित करता है कि वे ब्राह्मणों को केवल संस्कार कराने वाले पण्डितों के रूप में देखने के इच्छुक न थे किन्तु चाहते थे कि वे अनेकविध शिल्पविद्याओं को जानने वाले महान् वैज्ञानिक भी हो। अन्यत्र भी अनेक स्थलों पर महर्षि ने "यज्ञ" शब्द का अर्थ शिल्पविद्या अथवा शिल्पयज्ञ किया है ।

सृष्टि प्रभु की सोद्देश्य रचना है । वस्तुतः चेतन आत्मा के समस्त भोग और अपवर्ग प्राप्ति के साधन प्रकृति के सम्पर्क में सम्भव हो सकते हैं । भोग के अतिरिक्त पुरूष के आत्मसाक्षात्कार के लिए प्रधान रूप से जगत् की रचना होती है । ईश्वरीय व्यवस्था के कारण ही सृष्टि नियमबद्ध बनी है । इस नियन्ता और अधिष्ठाता के कारण प्राकृत तत्वों का संचालन व नियंत्रण होता है । प्रकृति का लक्षण देते हुए स्वामी दयानन्द "सत्यार्थ प्रकाश" के अष्टम समुल्लास में "सत्व रजस्तमा...." (सांख्य सूत्र १/६१) को उद्घृत कर लिखते हैं- (सत्व) शुद्ध, (रजः) मध्य, (तमः) जाडय् अर्थात् जड़ता तीन वस्तु मिलकर जो एक संघात है, उसका नाम 'प्रकृति' है । उससे महत्तत्व बुद्धि, उससे अहंकार, उससे पाँच तन्मात्रा सूक्ष्मभूत और दश इंद्रियाँ तथा ग्यारहवां मन, पाँच तन्मात्राओं से पृथिव्यादि पांच भूत, ये चौबीस तथा पच्चीसवां पुरूष अर्थात् जीव और परमेश्वर है । सांख्य दर्शन के षष्ठ अध्याय के अपने विद्योदय भाष्य में आचार्य उदयवीर शास्त्री देह और आत्मा की भिन्नता का उल्लेख करते हैं । देहादि पदार्थ भोग्य अथवा भोग के साधन हैं, पर आत्मा भोक्ता रहता है । कर्मानुरूप भोगों को भोगता हुआ जीवात्मा अध्यात्म विद्या में प्रवृत्त होने पर जब स्वरूप का साक्षात्कार कर लेता है, तब यह कृतार्थ हो जाता है। आत्माओं से संबंध रखने वाले कर्मों अर्थात् धर्म और अधर्म की विभिन्नता से सृष्टि में विविधता का प्रादुर्भाव होता है । कर्त्ता भोक्ता सुखी दुःखी आदि भावना पुरूष में, अहंकार का अस्तित्व होने पर उभरती है, केवल आत्मा में नहीं । बुद्धि अथवा अहंकार अंतःकरण

के सम्पर्क से पुरूष कर्तत्व, भोक्तृत्व सुख दुःख आदि का अनुभव करता है ।

सत्यार्थ प्रकाश के नवम समुल्लास में मुक्ति का प्रथम साधन विवेक के बारे में स्वामी दयानन्द लिखते हैं- 'जो पृथिवी से लेकर परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों के गुण-कर्म-स्वभाव से जानकर उसकी आज्ञा पालन और उपासना में तत्पर होना, उससे विरूद्ध न चलना, सृष्टि से उपकार लेना विवेक कहाता है । और आगे योग सूत्र को देकर उसका विवेचन करते हैं कि मनुष्य रजोगुण-तमोगुण युक्त कर्मों से मन को रोक, शुद्ध सत्वगुण युक्त कर्मों से भी मन को रोक, शुद्ध सत्वगुण हो पश्चात् उसका विरोध कर 'एकाग्र' अर्थात् एक परमात्मा और धर्मयुक्त कर्म इनके अग्रभाग में चित्त को ठहरा रखना निरूद्ध अर्थात् सब ओर से मन की वृत्ति को रोकना । जब चित्त एकाग्र और निरूद्ध होता है, तब सब के द्रष्टा ईश्वर के स्वरूप में जीवात्मा की स्थिति होती है । इसके बाद सांख्य सूत्र (१/१) देकर लिखते हैं कि, 'जो आध्यात्मिक अर्थात् शरीर-संबंधी पीड़ा, आधि भौतिक जो दूसरे प्राणियों से दुःखित होना, आधि दैविक जो अतिवृष्टि, अतिताप, अतिशीत, मन इन्द्रियों की चंचलता से होता है । इस त्रिविध दुःख को छुड़ाकर मुक्ति पाना अत्यन्त पुरूषार्थ है ।

स्वामी दयानन्द सरस्वती "सत्यार्थ प्रकाश" के द्वादश समुल्लास में जैन लोगों के प्रत्यक्ष प्रमाण मानने का प्रत्याख्यान करते हुए लिखते हैं कि- "क्या तुम जो प्रत्यक्ष पदार्थ है उन्हीं को मानते हो, अप्रत्यक्ष को नहीं ? जैसे कान से रूप और चक्षु से शब्द का ग्रहण नहीं हो सकता वैसे ही अनादि परमात्मा को देखने का साधन शुद्ध अन्तःकरण, विद्या और योगाभ्यास से पवित्रात्मा परमात्मा को प्रत्यक्ष देखता है । जैसे बिना पढ़े विद्या के प्रयोजनों की प्राप्ति नहीं होती वैसे ही योगाभ्यास और विज्ञान के बिना परमात्मा भी नहीं दीख पड़ता। जैसे भूमि के रूपादि गुण ही को देख जान के गुणों से अव्यवहित सम्बन्ध से पृथिवी प्रत्यक्ष होती है, वैसे इस सृष्टि में परमात्मा के रचना विशेष लिंग देख के परमात्मा प्रत्यक्ष होता है ।"

अभी तक के लिखे उदाहरणों से यह पता लगता है कि वेदों में परा-अपरा विद्याओं का मूलतत्व में दिग्दर्शन है । और वेद विज्ञान को जानकर तथा उस पर आचरण कर ही मनुष्य सुख, आनन्द को प्राप्त कर सकता है । ऋषि दयानन्द ने यह घोषणा की थी- वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, इसमें सब व्यवहारिक और पारमार्थिक विद्यायें है। । उन्होंने वेदार्थ करने की प्राचीन शास्त्रीय पद्धति का प्रचलन किया । वेदार्थ जानने के योग्य बनने के लिए ६ वेदांग (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, छन्द, ज्योतिष्)

६ शास्त्र (मीमांसा, वैशेषिक, न्याय, योग, सांख्य और वेदान्त) तथा ४ ब्राह्मण (ऐतरेय, शतपथ, साम और गोपथ) का पढ़ना अत्यावश्यक है । इस शास्त्रीय विद्या के अतिरिक्त वेदभाष्य करने वाले को योगी भी बनना आवश्यक है ।

ऋषि दयानन्द सरस्वती निर्देशित पठन-पाठन विधि के अनुसार आर्य समाज ने गुरूकुल और विद्यापीठ इत्यादि के माध्यम से व्याकरण और दर्शनों पर विशेष कार्य किया है । कल्प (स्वामी सत्यप्रकाशजी के विचार में भौतिकी, रसायन, शिल्प आदि शास्त्र भी एक प्रकार के कल्प हैं- यज्ञेन कल्पन्ताम्) और ज्योतिष (सूर्य सिद्धान्त, बीजगणित, अंक, भूगोल, खगोल, भूगर्भ और सृष्टि उत्पत्ति रचना विशेष इत्यादि विद्या है ।) पर अध ययन-अध्यापन होना जरूरी है । स्वामी सत्यप्रकाशजी के अनुसार- "कपिल और कणाद मुनियों के तत्व-विज्ञानों का आज के वैज्ञानिक विचारों के साथ समन्वय किया जाना जरूरी है । यह कार्य कोई सरल नहीं है ।" सभी ब्राह्मण (वेदों के व्याख्यान, ज्ञान-विज्ञान, यज्ञ के आगार) ग्रन्थों पर भी विशेष कार्य करना जरूरी है । इन सभी ग्रन्थों के अध्ययन-अध यापन से ही वेदों के विज्ञान (विशेष ज्ञान) का प्रकाश होगा । "महर्षि दयानन्द वर्णित शिक्षा पद्धति" पुस्तक के प्राक्कथन में लेखक डॉ. सुरेन्द्रकुमार लिखते हैं कि- "जो लोग महर्षि की पाठ विधि को धार्मिक या आध्यात्मिक शिक्षा तक सीमित करते हैं वे महर्षि के साथ अन्याय करते हैं और उनके विराट् चिन्तन को संकीर्ण बनाते हैं । ऐसा करके वे महर्षि का अवमूल्यन कर रहे हैं और उनके वेद भाष्य को भी व्यर्थ बता रहे हैं । उन्हें महर्षि के पदार्थविद्या, शिल्पविद्या और सब सत्यविद्या विषयक उल्लेखों-निर्देशों को गंभीरता से पढ़ना चाहिये ।"

इस प्रकार के अध्ययन, अनुसंधान और तपश्चर्या के लिए समय-समय पर अनेक आर्य विद्वान् निर्देश भी देते रहे हैं । इनमें से प्रमुख हैं- पं. भगवतदत्तजी, पं. गुरूदत्तजी विद्यार्थी, स्वामी वेदानन्दजी तीर्थ, पं. धर्मदेवजी विद्या मार्तण्ड, पं. युधिष्ठिरजी मीमांसक, स्वामी ब्रह्ममुनिजी, आचार्य उदयवीरजी शास्त्री, डा. रामनाथजी वेदालंकार और स्वामी सत्यप्रकाशजी इत्यादि । उपर्युक्त सभी विद्याओं पर तप करने, कार्य करने की महती आवश्यकता पर इन सभी विद्वानों ने बल दिया है । थोड़े अंशों में वेदविज्ञान (कल्प/ज्योतिष) पर कुछ आर्य विद्वानों ने थोड़ा परिश्रम भी किया है, किन्तु इन पर विशेष कार्य होना जरूरी है । इसी प्रकार उपवेद (आयुर्वेद, धनुर्वेद, गांधर्ववेद और अर्थवेद) पर भी विशेष कार्य होना जरूरी है । इसी से गुरूकुल के समावर्तन संस्कार में वर्ण निर्धारण

और व्रत लेने के कार्य में सहायता मिलेगी ।

जो लोग वेदविज्ञान (सृष्टि विद्या, यज्ञ/शिल्प, भौतिक शास्त्र) पर वर्तमान में कार्यरत है।, उनमें आचार्य श्री अग्निव्रतजी एक हैं जो "सृष्टि उत्पत्ति और मूलभूत कण" विषय पर वेद, ब्राह्मण तथा दर्शन की सहायता से अनुसंधान में तत्पर हैं । अजमेर के १६६६ ई. के ऋषि मेले के अवसर पर 'वेद और विज्ञान' विषय पर आयोजित वेद गोष्ठी में आपका निबन्ध "वेदों में विद्युत् विद्या" सराहनीय है । इसमें वैदिक मान्यताओं के प्रकाश में वर्तमान वैज्ञानिक मान्यताओं को देखने का प्रयास किया गया है । आपके द्वारा लिखित अन्य पुस्तक- 'सृष्टि का मूल उपादान कारण' (Basic Cause of the Creation) के प्राक्कथन (Forward) में डॉ. आभास मित्रा, अध्यक्ष, सैद्धान्तिक खगोल भौतिकी विभाग, भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, मुम्बई लिखते हैं कि– "यह अत्यन्त श्रद्धा का विषय है कि स्वामी अग्निव्रत बिना सुव्यवस्थित ढंग से विज्ञान पढे, स्वयं ही पढकर वैदिक रहस्यों को जानने हेतु अत्यन्त उत्साह के साथ आगे बढ रहे हैं । यह मेरे लिए आश्चर्य की बात है कि कणभौतिकी में ब्रह्माण्ड में जिन कणों वा कणों के समुदाय को मूलकण कहा जाता है, मूलकण नहीं है, ऐसी कमियों को देखने में स्वामी अग्निव्रत तीक्ष्ण रूप से जागरूक हैं । स्वामी अग्निव्रत मानते हैं कि ऐसे प्रश्नों का सही उत्तर वेदों में ही खोजा जा सकता है, आधुनिक विज्ञान के द्वारा नहीं । यद्यपि मैं निश्चित रूप से मानता हूँ कि विज्ञान को अपने अन्वेषण बन्द नहीं करने चाहिये । फिर भी मैं अनुभव करता हूँ कि अध्यवसायी वैज्ञानिकों को भी कुछ बिन्दुओं पर अन्वेषणों की सिद्धि में वैदिक संकेतों का सहयोग भी लेना चाहिये। वास्तव में आधुनिक क्वाटंम यांत्रिकी वेदों से कई रहस्यों के बीज प्राप्त कर सकती है । सम्भवतः अधिकांश लोगों को पता नहीं है कि क्वाटंम यांत्रिकी के जनक वैज्ञानिक हाइजनबर्ग शान्ति निकेतन में रवीन्द्रनाथ टैगोर के अतिथि बने थे । उन्होंने स्वीकार किया कि टैगोर से भारतीय दर्शन पर चर्चा से उन्हें सहायता मिली थी ।

मैं व्यक्तिगत रूप से इस पुस्तक के अध्ययन से लाभान्वित हुआ हूँ, आशा करता हूँ दूसरे पाठक तथा अध्यवसायी वैज्ञानिक भी मेरी ही भांति इसे पढकर लाभ उठायेंगे ।"

"सृष्टि का मूल उपादान कारण" पुस्तक की भूमिका में आचार्य अग्निव्रतजी लिखते हैं- 'यह ब्रह्माण्ड किस मूल पदार्थ से बना है, यह एक अत्यन्त गहन व सूक्ष्म विषय है । वर्तमान भौतिक विज्ञान तथा प्राचीन सनातन वैदिक विचारधारा का इस विषय में क्या

सिद्धान्त है, इस पर चर्चा करना इस पुस्तक का विषय है।" इस पुस्तक में दोनों विचार धाराओं को प्रस्तुत कर विज्ञान के अति प्रचलित सिद्धान्तों पर ज्वलन्त प्रश्न उठाये हैं।

वेद के ज्ञान-विज्ञान को संसार के विकसित विज्ञान के समक्ष प्रतिष्ठित करना अत्यन्त आवश्यक है। ऐसा करने पर ही वेदों को समस्त मानव जाति का धर्म ग्रन्थ माना जा सकेगा। आचार्यजी का मानना है कि यदि वैदिक वाङ्मय के साथ-साथ आधुनिक भौतिकी का अध्ययन अनुसंधान पूर्वक किया जाये तो आधुनिक विज्ञान को एक नई दृष्टि मिल सकती है, साथ ही वैदिक वाङ्मय की प्रामाणिकता बढ़ सकती है। इसी उद्देश्य की सिद्धि के लिए आचार्य श्री अग्निव्रतजी ने २६ फरवरी, २००६ को ऋषि बोध दिवस पर विश्व के विकसति देशों के वैज्ञानिकों के समक्ष वेदादि ग्रन्थों की प्रामाणिकता तथा अपौरूषेयता को १२ वर्षों की अल्पावधि में सिद्ध करने का महाव्रत लिया था। किन्तु इसके साथ ही उन्होंने एक और संकल्प ले लिया था- 'यदि लक्ष्य प्राप्त न हुआ तो शरीर त्याग दूंगा।" इस प्रतिज्ञा के औचित्य पर बहुत प्रश्नचिह्न लगे। अन्त में ६-२-२००८ में श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास के तत्वावधान में आयोजित वेद-धर्म-विज्ञान सम्मेलन के अवसर पर डॉ. श्री सुरेन्द्रकुमारजी, आचार्य स्वदेशजी तथा अन्य विद्वानों और धर्मप्रेमी बन्धुओं के साग्रह निवेदन पर शरीर त्याग का संकल्प पर संशोधन किया। उस प्रतिज्ञा का पूर्ण विवरण इस पुस्तक में ही दिया गया है।

मैं भी इस न्यास से गत ४ वर्ष से जुड़ा हूँ। यहां की कार्यप्रणाली पर प्रसन्न हूँ। इसी बीच दो सम्मेलन तथा दो सेमीनार भी रखे गये। आधुनिक वैज्ञानिकों को तथा वैदिक वाङ्मय के विद्वानों को साथ बैठकर अध्ययन/अनुसंधान करना जरूरी है, यह कष्ट साध्य है, लेकिन ईश्वर विश्वास और तपश्चर्या से कार्य फलीभूत होंगे। आर्य जगत् के कुछ विद्वानों तथा संन्यासियों का भी प्रोत्साहन व आशीर्वाद आचार्यजी के साथ है।

अन्त में मैं भारत के महान् वैज्ञानिक तथा शिक्षा शास्त्री डॉ. दौलतसिंह कोठारी ने २६ जनवरी सन् १६६६ को दिल्ली में सम्पन्न अन्तर्राष्ट्रिय विज्ञान और तकनीकी सम्मेलन (International Conference on Science and Technology) में दिये समापन भाषण को कुछ अंश को उद्धृत करना चाहूँगा -

"मुझे खेद है कि भारत के बौद्धिक जीवन का केन्द्र भारत से बाहर है। हम प्रायः विदेशी विचारधारा से प्रभावित होते हैं। हमारे विश्वविद्यालय बाहर से लाकर रोपे गये हैं और अभी तक इस देश की धरती में जड़ नहीं पकड़ सके हैं। मैं भारतीय आवश्यकताओं की सम्पूर्ति के लिए विश्वविद्यालयों के ढाँचे में सुपरिवर्तनों का आग्रही हूँ। प्राचीन संस्कृत-साहित्य में सुरक्षित विचारधारा को इस देश की विश्वविद्यालयी शिक्षा में स्थान नहीं मिला है। इस देश के लिए अपनी प्राचीन धरोहर को खोज निकालना आवश्यक है। (स्वामी विद्यानन्द सरस्वती द्वारा लिखित "दिव्य ज्ञान" पुस्तक की भूमिका से।)

इस लघु पुस्तक के द्वितीय प्रकाशन पर मुझे दो शब्द लिखने हेतु न्यास के मन्त्रीजी ने कहा, इसका मैंने पूरा लाभ उठाया। महर्षि दयानन्द सरस्वतीजी की पुस्तकों का अवलोकन करने का मुझे मौका मिला, और इससे मुझे बहुत आनन्द मिला।

मैं सम्मेलनों के अतिरिक्त भी दो बार आचार्यजी के पास १५-२० दिन रह कर इनके साथ वैदिक व आधुनिक भौतिक विज्ञान पर गम्भीर संवाद व अध्ययन किया है तथा इनको निकटता से समझने का प्रयास किया है।

आचार्य श्री अग्निव्रतजी की चिन्तन शैली, शब्दों की गहराई, वैदिक व भौतिक वैज्ञानिक वाङ्मय की गहनता में जाने की क्षमता अपने में विशेष और मेधापूर्ण है। ईश्वर करे कि आपको सम्पूर्ण वैदिक व वैज्ञानिक जगत् सर्वात्मना सहयोग, प्रोत्साहन और आत्मीयता दे। भीष्म प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिए ईश्वर स्वास्थ्य, दीर्घायु और प्रज्ञा दे। इसी कामना के साथ......

डॉ. वसन्तकुमार मदनसुरे (पूर्व प्रमुख)
अपारम्परिक ऊर्जा स्रोत और विद्युत अभियान्त्रिकी विभाग,
पंजाबराव देशमुख कृषि विद्यापीठ, अकोला (महाराष्ट्र)
विशेष आमन्त्रित सदस्य
श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास, भागलभीम

ओ३म्

-: प्रार्थना :-

हे प्रभु देना सहारा, पार नैया कीजिए ।
लक्ष्य हित बढ़ता रहूँ मैं, शक्ति बुद्धि दीजिए ।।
वेद की संस्थापना हो, विश्व भर में हे प्रभु ।
इसका ही विज्ञान जागे, इच्छा है मेरे विभो ।।
इसलिए जीवन मरण हो, भावना यह दीजिए ।।१।। हे प्रभु....

वेद तेरा ज्ञान है, सुनता रहा हूँ लोक में ।
तुझको ऋषि मुनियों ने ध्याया, इसके ही आलोक में ।
आज शंका विघ्न आये दूर इनको कीजिए ।।२।। हे प्रभु....
संशयों में जीना मुझको, ना कभी स्वीकार्य है ।
(हो निरूत्तर बैठ रहना, ना मुझे स्वीकार्य है)
सत्य की रक्षा ही करना, मेरा पावन कार्य है ।
कार्य सिद्धि कर सकूँ, वरदान ऐसा दीजिए ।।३।। हे प्रभु....

मन की चंचलता हरो, यह दुःख मुझको दे रहा ।
(मन की दुर्बलता हरो, यह कष्ट मुझको दे रहा)
सत्य पथ पर ही बढ़े जो, आज विचलित हो रहा ।
एक मन बनकर बढ़ूँ मैं, नाथ करूणा कीजिए ।।४।। हे प्रभु....
लक्ष्य लीना है कठिन अब, लाज तेरे हाथ में ।
पाके इसको ही रहूँ, विनती करूँ हे मात ! मैं ।
अग्नि सम जलता रहूँ मैं, प्रेरणा भर दीजिए ।।५।। हे प्रभु....

यदि रहूँ जीवित जगत् में, तेरे चरणों में रहूँ ।
सत् गहूँ त्यागूँ असत् को, अन्यथा तन छोड़ दूँ ।
आ गया तेरी शरण में, याचना सुन लीजिए ।।६।। हे प्रभु....

ओ३म्

नमो ब्रह्मणे देवेभ्यश्च पूर्वजेभ्यः

-: संस्कृत गीतिका :-

ओ३म् परमेशदेवेश, सर्व-रक्षक पाहि नः ।
नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं नमो नमः ।। १ ।।

सृष्ट्यादेरग्नि-वायू च, अंगिरादीनृषीन् तथा ।
तेभ्यः प्राधीत-वेदञ्च, ब्रह्माणञ्च प्रजापतिम् ।। २ ।।

स्वायम्भुवं दयावन्तं, मनुं प्राज्ञं महोदयम् ।
निर्ममे विधिशास्त्रं यः, सर्वलोकहिताय च ।। ३ ।।

आर्यावर्तस्यदेशस्य, इक्ष्वाकुं चादि भूपतिम् ।
विष्णुं शिवमहादेवं, इन्द्रदेव-बृहस्पती ।। ४ ।।

मार्कण्डेयं भृगुं यास्कं, चापि वेद - प्रवाचकान् ।
सनत्कुमारमात्मज्ञं, सर्वान् शौर्यशिरोमणीन् ।। ५ ।।

मान्धातारमगस्त्यञ्च, अत्रिनारदधीवरान् ।
वेद-वेदांग-तत्वज्ञं, श्रीरामं सह सीतया ।। ६ ।।

भरत सौमित्राञ्चापि, हनुमन्तं यशस्विनम् ।
विश्वमित्रं वशिष्ठं च, भरद्वाज-महामुनिम् ।। ७ ।।

वाल्मिकि-याज्ञवल्क्यौ च, विदेहाश्वपती तथा ।
गार्गीं घोषां अपालां च, लोपामुद्रां पृथामपि ।। ८ ।।

प्रख्यापितो महानार्या - वर्त्तो देशस्त्वयं पुरा ।
भरतं पृथिवीपालं यन्नाम्ना भारतोऽभवत् ।। ९ ।।

पाणिनिं शब्दशास्त्रज्ञं, व्यासं देवं पतञ्जलिम् ।
गोतम-कपिलाचार्यौ, कणादर्षि च जैमिनीम् ।। १० ।।

योगेशं भगवत्कृष्णं महाप्राज्ञं महाप्रभुम् ।
अष्टाशीति-सहस्राणि ऋषीन् वा ऊर्ध्वरेतसः ।। ११ ।।

गांगेय-भीष्म कौन्तेयान्, कौटिल्यं गुप्त-भूपतिम् ।
देशभक्त-सुवीराणाम् मातृणां चापि वीरताम् ।। १२ ।।

आद्यं च शंकराचार्यं, आर्य-भट्टं तथैव च ।
भास्कर-ब्रह्मगुप्तौ च, विरजानन्द-दण्डिनम् ।। १३ ।।

सुवेदोद्धारकाचार्य-दयानन्द-सरस्वतीम् ।
आइंस्टीन-सुविज्ञानं, न्यूटन-बोस-शेखरान् ।। १४ ।।

अन्ये ये निरता ज्ञाने, एतान् सर्वान् महामतीन् ।
आर्याः कर्मगुणाभ्यां ये, प्राणिकल्याणसाधकाः ।। १५ ।।

तान् महापुरूषान् सर्वान्, सर्वदेश-निवासिनः ।
सर्वान् एतान् महाभागान्, स्मराम सततं वयम् ।। १६ ।।

एतेषामेव पन्थानं, संचलेम सदा प्रभो ।
सुबुद्धिं देहि शक्तिं च, याचेम त्वां कृपानिधे ।। १७ ।।

सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु, सन्तु सर्वे निरामयाः ।
सर्वे पश्यन्तु भद्राणि, मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत् ।। १८ ।।

ओ३म्

-: सम्पादकीय :-

मान्यवर पाठकवृन्द ! हर प्राणी दुःखों से बचना एवं सुख प्राप्त करना चाहता है। जिस प्रकार कोई भी देश को सुव्यवस्थित ढ़ंग से चलाने के हेतु संविधान की आवश्यकता होती है, ठीक उसी भांति सम्पूर्ण सृष्टि संचालन हेतु परम पिता परमात्मा ने वेद ज्ञान रूपी संविधान का निर्माण किया एवं मनुष्य को इसके अनुरूप आचरण कर मोक्ष प्राप्ति की राह बतायी । यदि हम सुखी बनना चाहते हैं तो केवल और केवल यही एक मार्ग है । महर्षि ब्रह्मा से लेकर महर्षि दयानन्द पर्यन्त ऋषियों की यही मान्यता रही है ।

परन्तु इसके विपरीत आज हम सर्वत्र अशान्ति ही अशान्ति और दुःख की स्थिति का आभास कर रहे हैं । बस इसका मूल कारण वैदिक मान्यताओं से अनभिज्ञ होना अथवा इसके अनुरूप आचरण न करना है । मनुष्य वही है, जो दूसरों के दुःख को अपना दुःख समझे, अपनी उन्नति से सन्तुष्ट न होकर सदैव परोपकार हेतु अपना सर्वस्व अर्पण कर सदा प्रयत्न किया करे, सम्पूर्ण विश्व को अपना परिवार समझे, खुद कष्ट उठाकर भी विश्व कल्याण की भावना से दूसरों के कष्ट निवारण हेतु सदा यत्न किया करे । वेद ज्ञान के प्रकाश से ही यह सम्भव है । आज जो दुःख और अशान्ति के कारण दिख रहे हैं, यह सब वेद ज्ञान भुला देने के कारण ही है ।

मान्यवर पाठकगण ! पूर्व में श्री अमितजी शास्त्री के सम्पादन में यह पुस्तक 'आचार्यश्री का भीष्म संकल्प' नाम से प्रकाशित हुई थी । इस बार द्वितीय संस्करण में पूज्य आचार्य जी ने अपने लेखों में कुछ संशोधन किया है तथा 'वेद विज्ञान शोधा प्रक्रिया' नामक लेख अतिरिक्त जोड़ा गया है । इसके साथ कुछ विद्वानों की सम्मतियां भी इसमें प्रकाशित की गई है । इस बार इस पुस्तक का प्राक्कथन एक भौतिक वैज्ञानिक मान्यवर डॉ. वसन्तकुमारजी मदनसुरे जो महान् ऋषि भक्त भी हैं, ने लिखी है । उन्होंने हमारा निवेदन स्वीकार करके महत्वपूर्ण प्राक्कथन लिखा है, एतदर्थ हम उनके विशेष आभारी हैं।

इस पुस्तक में आप ऐसे व्यक्ति का भीष्म संकल्प जानेंगे जिन्होंने अपना सर्वस्व अर्पण कर विश्व में शान्ति की स्थापना हेतु कष्ट पूर्ण जीवन बिताकर भी प्राणी मात्र को कष्ट मुक्त करने के लिए वेदों को वैज्ञानिक सिद्धान्तों की कसौटी पर कस कर ईश्वरीय सिद्ध करना एवं वैदिक विज्ञान द्वारा आधुनिक विज्ञान को नयी दिशा देकर इसे विनाश की राह से बचाकर कल्याण मार्ग में प्रशस्त कराना ही अपना जीवन व्रत माना है। हमारे न्यास के संस्थापक एवं अध्यक्ष, पूज्य, सत्यनिष्ठ, वैदिक आचार्य श्री अग्निव्रतजी नैष्ठिक ने विश्व के विकसित देशों के वैज्ञानिकों के समक्ष वेदों को १२ वर्षों की अल्पावधि में ईश्वरीय सिद्ध करने का महाव्रत लिया था। जिसे अनेक विद्वानों के सत्याग्रह पर संशोधित करके तीन वर्ष अवधि बढ़ाई गई है। ऋषि बोध पर्व (दि. २६ फरवरी २००६) पर यह महाव्रत लेकर हम न्यासियों या न्यास संरक्षकों के सम्मुख ही नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रिय महासम्मेलन, नई दिल्ली में हजारों की संख्या में उपस्थित प्रबुद्ध आर्यजनों के सम्मुख इस महाव्रत को दुहराया था। श्री आचार्य श्री के बदायूँ प्रवास पर राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित विद्वान् शिरोमणि पूज्यपाद आचार्य श्री विशुद्धानन्दजी मिश्र (वेदार्थ कल्पद्रुम जैसे महाग्रन्थ के प्रणेता) ने भी इस व्रत को सुनकर आश्चर्य व्यक्त करते हुए कहा कि यह एक अद्भुत एवं विशेषावश्यक कार्य है। आप भारत के प्रथम ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने इस महान् कार्य को अपना लक्ष्य बनाया और वेदों की प्रामाणिकता सिद्ध हो जाने पर विश्व के प्रथम व्यक्ति होंगे।

मैं सन् १९९२ से आचार्यजी को जानता हूँ। मैंने इनमें देखा कि ये उपहास में भी प्रायः मिथ्या प्रतिज्ञा नहीं करते। अगर कहीं कुछ कह दिया तो उसे पूर्ण अवश्य करते हैं। आचार्यजी में एक और विशेषता हमने यह देखी है कि असत्य के परित्याग व सत्य मत के ग्रहण हेतु सदैव तत्पर रहते हैं। इसी कारण आपने किशोरावस्था से ही अनेक मत मतान्तर वाले आचार्यों, धर्मगुरूओं, विज्ञान के व्याख्याताओं से आर्य समाज के चतुर्थ नियम के प्रकाश में शास्त्रार्थ, संवाद व पत्र व्यवहार किया है। ईश कृपा से इन्हें कभी पराजय का सामना नहीं करना पड़ा। वे यद्यपि तीन पीढ़ी से आर्य संस्कार प्राप्त हैं पुनरपि उनकी आस्था परम्परा में नहीं बल्कि स्वयं सत्यानुसंधान में है। कुछ वर्ष पूर्व जब यह न्यास प्रारम्भ ही हुआ था, राजस्थान के प्रसिद्ध सन्त

पूज्यपाद संत हरवंशसिंहजी निर्मल (भादरियाजी महाराज, जैसलमेर) ने आपके शोधकार्य की जानकारी प्राप्त कर इस महान् कार्य हेतु अपने यहाँ राष्ट्रिय राजमार्ग सं. १५ पर एक सौ बीघा भूमि, भवन, विशाल पुस्तकाल्यादि समस्त सुख सुविधा का प्रस्ताव करते हुये आमन्त्रित किया था। यद्यपि श्री महाराजजी का आचार्यजी से आर्य समाज त्यागने का कोई शर्त संकेत मात्र भी नहीं थी पुनरपि मेवाड़ महाराजा सज्जनसिंहजी तथा ओखी मठ के महन्त का प्रलोभन ठुकराने वाले भगवद् दयानन्दजी महाराज श्री के सच्चे भक्त आचार्यजी ने उन महाराज श्री को विनम्रतापूर्वक धन्यवाद देते हुये लिखा था –"महाराजजी ! मेरा जीवन व्रत है कि मैं सत्य को ही स्वीकार करता हूँ। अभी तक केवल वेद मत को ही सत्य समझा है...। वेद मत को समझने हेतु समस्त ऋषियों और उन्हें समझने हेतु महर्षि दयानन्दजी को समझना अनिवार्य है। ...सत्यार्थ प्रकाश मेरे जीवन का प्राण है और सदैव रहेगा भी...जन्मा आर्य समाजी हूँ...और मरूँगा भी ....चाहे चन्द्रमा अपनी शीतलता, सूर्य अपना तेज और पृथिवी अपनी गुरूता का त्याग कर दे परन्तु मैं आर्य समाज के सिद्धान्त नहीं त्याग सकता। ...हाँ, आत्महत्या करना तो सम्भव है परन्तु आर्य सिद्धान्त त्यागना सर्वथा असम्भव.।"

आर्य सज्जनो ! क्या ऐसा उदाहरण वर्तमान में मिलना सम्भव है ? काश ! किसी आर्य शिरोमणि संस्था वा आर्य श्रेष्ठी ने ऐसी उदारता दिखाई होती। आर्यों ! तीक्ष्ण प्रतिभा के साथ-साथ ऐसा तप, त्याग व सत्याचरण मिलना प्रायः दुर्लभ ही होता है।

अतः समस्त वेद भक्तों का परम कर्तव्य तथा दायित्व बनता है कि ऐसे प्रखर बुद्धि सम्पन्न सत्यव्रती वैदिक वैज्ञानिक आचार्य श्री के संकल्प को शीघ्र पूर्ण करवाने हेतु तन-मन-धन से सर्वात्मना सहयोग करावें। वेदों में किसी एक वैज्ञानिक-आविष्कार या सिद्धान्त को लेकर कोई भी प्रतिभाशाली वैज्ञानिक शोध कर सकता है, परन्तु समस्त विज्ञान को ही चुनौती मानकर संसार के विकसित देशों के प्रबुद्ध वैज्ञानिकों में वेद की प्रामाणिकता, ईश्वरीयता तथा सम्पूर्ण विज्ञान का मूल ग्रन्थ सिद्ध करना अपने आप में

दुरूह तथा अद्भुत कार्य है । परन्तु भी आचार्य श्री को पूर्ण आत्मविश्वास व ईश्वर पर भरोसा है कि लक्ष्य समयावधि से पूर्व ही प्राप्त होगा ।

हमें भी आचार्य श्री की प्रखर मेधा बुद्धि पर पूर्ण विश्वास है कि यह कार्य समयावधि से पूर्व ही सम्पन्न होगा । स्वास्थ्य सम्बन्धी अनेक बाधाओं से जूझते हुए भी मात्र १-२ मास के अल्प प्रयास में "सृष्टि का मूल उपादान कारण" नामक पुस्तक की रचना की जिसके कई प्रश्नों के उत्तर आधुनिक वैज्ञानिक नहीं दे सके हैं । आपने विश्व मंच पर भी अवैदिक मान्यताओं एवं आधुनिक विज्ञान की न्यूनताओं को चुनौती दी है । आज विश्व में अनोखा अक तक के इतिहास का सबसे बड़ा महाप्रयोग, जो जिनेवा की CERN प्रयोगशाला में लगभग ८००० वैज्ञानिकों की देखरेख में खरबों रूपयों की लागत से चल रहा है, आचार्य श्री केवल अकेले अपने मस्तिष्क में बिना प्रयोगशाला के मात्र वेदादिग्रन्थों के अध्ययन तथा आधुनिक वैज्ञानिक ग्रन्थों की समीक्षा से कर रहे हैं । दोनों का मूल उद्देश्य है सृष्टि की उत्पति में प्रयुक्त मूल कण की खोज। आचार्य श्री का मानना है कि आधुनिक विज्ञान इस प्रयोग के बल पर भी जो मूल कण खोजने का दावा करेगा, वह भी अपूर्ण साबित होगा । समस्त वेदभक्तों से सर्वात्मना सहयोग की भावना के साथ..... ।

शारदीय नवसस्येष्टि (दीपावली)
महर्षि दयानन्द निर्वाण दिवस
कार्तिक अमावस्या २०६५ वि. सं.
दिनांक : २८ अक्टूबर २००८

अभिषेक आर्य (डूंगरराम)
मंत्री, वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास
भागलभीम, भीनमाल

ओ३म्

सत्य धर्म तथा कल्याणकारी विज्ञान की ओर

मेरे आदरणीय मित्र महानुभाव ! यह स्वभाव प्रत्येक प्राणी का होता है कि वह दुःख से बचना तथा सुख को पाना चाहता है । फिर भला सृष्टि का सर्वोत्कृष्ट प्राणी मनुष्य क्यों नहीं सुख प्राप्ति हेतु पूर्ण पुरूषार्थ करेगा ? आज संसार भर के प्रबुद्ध मनुष्य चाहे वे किसी भी उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर आसीन हों, संसार को सुखी बनाने का यत्न अपने-अपने ढ़ंग से करते प्रतीत हो रहे हैं । संसार के संविधान, धर्माचार्य, सामाजिक संस्थाएँ, विकसित होता विज्ञान, अर्थशास्त्री, शिक्षा-नीतियां आदि सभी इसके लिए प्रयत्नशील हैं कि मनुष्य सुखी होवे परन्तु इसके उपरान्त भी आज सम्पूर्ण विश्व अशांति, आतंक, हिंसा, घृणा, मिथ्या, छल-कपट, ईर्ष्या, राग, द्वेष से ग्रस्त होकर अति दुःखी व अशांत है। धनी, निर्धन, बली-निर्बल या विद्वान्-मूर्ख सभी अशांत हैं । तब विचार होता है कि क्या कारण है कि चिकित्सा करते रहने पर भी रोग बढ़ता ही जा रहा है । मेरा मानना है कि इस सब का मूल कारण सत्य और वास्तविकता से अनभिज्ञ रहना अथवा जानकर भी उसके अनुकूल व्यवहार न करना ही है । आज सारे संसार में विकास की प्रतिस्पर्धा हो रही है। **हम दूसरे को छल से गिराकर उससे आगे जाना चाहते हैं । दूसरे की झोंपड़ियाँ जलाकर अपने भव्य भवन बनाना चाहते हैं, दूसरे की थाली से सूखी रोटियां भी छीनकर स्वयं सुस्वादु सरस भोजन करना चाहते हैं, दूसरों के तन के जीर्ण-शीर्ण वस्त्र भी खींचकर स्वयं बहुमूल्य वस्त्र पहनकर फैषन करना चाहते हैं, तथा दूसरों का गला घोंटकर स्वयं एकाकी अमर जीवन जीना चाहते हैं ।** क्या ऐसा विकास हमारी शांति का विनाशक नहीं है ? मानवीय-आत्मा का हनन करने वाला नहीं है ? हमें विचारना होगा कि विज्ञान ने हमें अनेकों सुख सुविधाऐं प्रदान की परन्तु क्या हम सुखी व सन्तुष्ट हुए? क्या दया, करूणा, मैत्रीभाव, भाईचारा, ईमानदारी, सच्चाई जैसे मानवीय मूल्यों को यह अंधाधुंध विकास की आंधी ने नष्ट-भ्रष्ट नहीं कर दिया है ? जिस मनुष्य के लिए इन संसाधनों का विकास हो रहा है, वह मनुष्य अन्तःकरण एवं आत्मा से कितना विकसित हुआ है ? उसका ह्रदय कितना विशाल व उदात्त हुआ है ? उसका मस्तिष्क कितना सत्यासत्य विवेकी व न्यायप्रिय हुआ है क्या आज किसी के पास यह सोचने का समय वा इच्छा

है? परन्तु मेरे प्यारे मित्रो ! जरा सोचिए ! इसका दोष विज्ञान को तो नहीं दिया जा सकता। विज्ञान तो साधन है, साधन स्वयं में अच्छा या बुरा नहीं होता, बल्कि उसके उपयोगकर्ता पर निर्भर है कि साधन से अच्छा कार्य करे वा बुरा । उपयोगकर्ता की मनोवृतियां ही अच्छे व बुरे के लिए उत्तरदायी हैं । अब प्रश्न उठता है कि मनुष्य की पतनोन्मुखी मनोवृतियों का परिष्कार कौन करे? तब हमारा ध्यान सहसा ही धर्म की ओर जाता है परन्तु आज संसार में देखें तो अनेक परस्पर विरूद्ध विचार वाले मत मतान्तर धर्म का रूप धारण करके मानव को सुधारने का प्रयत्न करते दिखाई दे रहे हैं और वास्तविकता यह है कि मानव इनमें फँसकर अंधविश्वास, रूढ़िवाद, अविद्या, दुराग्रह, पारस्परिक घृणा, हिंसा की ओर बढ़ता रहा है एवं बढ़ रहा है । धर्म के नाम पर जितना रक्तपात व वैमनस्य संसार में सदियों से होता आया है सम्भवतः उतना किसी अन्य कारण से नहीं हुआ हो । आज भी यह पाप जारी है । मैं जब इस पर विचारता हूँ तो प्रतीत होता है कि **केवल विश्वास के आधार पर टिके मत–मतान्तरों का होना ही मानव जाति के लिए घातक है** । इस अनिष्ट फल से बचने के लिए धर्म (जो केवल एक ही हो सकता है जबकि मत-पंथ अनेक हो सकते हैं) को सच्चे स्वरूप में समझना होगा । ऐसा तब हो सकेगा जब इसे विज्ञान के साथ पूर्णतः जोड़ दिया जायेगा। तब धर्म पर आस्था रखने वाले उसी प्रकार एकमत हो सकेंगे, जिस प्रकार भौतिकी, रसायन-विज्ञान, गणित, खगोलिकी, जीव-विज्ञान, कृषि विज्ञान, आयुर्विज्ञान आदि विषयों में संसार के सभी मनुष्य एक मत हैं। इन भौतिक विद्याओं के कारण संसार में न कभी अलगाववाद पनपा और न रक्तपात ही हुआ । मुझे आश्चर्य व दुःख है कि दुःखनाशक व सुखमूलक धर्म के नाम पर यह पाप क्यों ? आध्यात्मिकता के नाम पर ईर्ष्या, द्वेष, हिंसा क्यों? मेरे जागरूक मित्रो ! **हमें धर्म का एक ऐसा सच्चा स्वरूप संसार के सम्मुख लाने का प्रयास करना होगा, जिसमें पाखण्ड, अंधविश्वास, अवैज्ञानिकता, पूर्वाग्रह, रूढ़िवाद, अमानवीयता, पक्षपात व असत्य का कोई स्थान नहीं हो । जो देष, काल व परिस्थितियों की सीमाओं से परे शाश्वत व सार्वदेशिक हो । जो मानव ही नहीं अपितु प्राणिमात्र के लिए सदैव हितकर हो। यही विचार संसार के आद्य ऋषि ब्रह्मा से लेकर ऋषि दयानन्द पर्यन्त का रहा है** । धर्म के नाम पर अलगाववाद का पाठ पढ़ाने वाले, सत्य-तर्क-विज्ञान के नाम से भयभीत होकर दूर भागने वाले धर्मप्रचारकों, आचार्यों, साधु-सन्तों, पंडितो, मौलवियों, पादरियों, ग्रंथियों आदि सभी मान्य महानुभावों को अपने-अपने हठ, दुराग्रह, पूर्वाग्रह,

पद-प्रतिष्ठा धन की लालसा को त्याग कर विज्ञान-बुद्धि से सोचने का साहस जुटाना होगा। उन सभी महानुभावों को विचारना होगा कि जब हम परमात्मा के बनाये भौतिक नियम विज्ञानादि पर एकमत हो सकते हैं । इन विषयों को साथ-साथ मिल बैठकर पढ़-पढ़ा सकते हैं और ऐसा करते हुए भौतिक उन्नति कर सकते हैं, तब इसी भाँति परमात्मा के ही बनाये आध्यात्मिक नियमों में परस्पर भेद क्यों स्वीकार करते व बढ़ाते हैं ? आज नये-नये मत जन्म लेकर अपने को सच्चा धर्म बताने का दावा कर रहे हैं, तो आमजन जिसका धर्म विषयक विशेष अध्ययन व चिन्तन नहीं होता, भय या लोभ के वशीभूत अथवा भीड़ को देखकर मत-पंथों के दलदल में फँस जाता है । बड़े-बड़े राजनेता, समाजशास्त्री, पत्रकार, संविधानवेत्ता व साहित्यकार भी धर्म विषय में नितान्त मूढ़बन सत्यासत्य विवेक बिना ही एकता का मिथ्या पाठ पढ़ाते हैं । कोई यह विचारने का यत्न नहीं करता कि सत्य का आधार न तो भारी भीड़ होती है, और न ही लोभ या भय से उत्पन्न कोई फलाकांक्षा की पूर्ति हो जाना । सत्य का निर्णय वैज्ञानिक बुद्धिजन्य तर्क, प्रमाण व तथ्यों के आधार पर तथा गहन, मनन, चिन्तन व निर्मल निष्पक्ष निःस्वार्थ हृदय से ही हो सकता है जो आज दुर्लभप्रायः हो गया है । हम यह भी विचारने का प्रयत्न नहीं करते कि हम धर्माचार्य सत्य, न्याय, निःस्वार्थ, निष्कपटता की बात करते अवश्य हैं, परन्तु अपने-अपने मत की न्यूनताओं को जानते हुए भी दुराग्रही बने रहते हैं तथा अपने मत के दोष बतलाने वाले के प्राण घातक भी बन बैठते हैं । तब सत्य ग्रहण की तो बात ही क्या कहें ? उधर जो वैज्ञानिक सत्य, न्याय, पक्षपातरहितता, अध्यात्म, निर्मलता, नैतिकता की लेशमात्र भी चर्चा नहीं करते, वे सत्य के ग्रहण तथा असत्य के परित्याग के लिए सदैव तत्पर रहते हैं । कोई वैज्ञानिक जिसे धर्माचार्य भले ही नास्तिक कह दें, अपने जीवन भर के पुरूषार्थ से खोजे गये किसी सिद्धान्त को किसी अन्य वैज्ञानिक द्वारा असिद्ध होते जान लेता है, तब वह तत्काल अपनी भूल को स्वीकार कर नवीन सिद्धान्त को अपना लेता है, जिस बात को वैज्ञानिक नहीं जानता तो तत्काल अपनी कमी स्वीकार कर लेता है । कभी अतिश्योक्ति में बात नहीं करता । अहा ! कैसा अनूठा आदर्श वे हम धर्माचार्य कहाने वालों के लिए प्रस्तुत करते हैं । ऐसे धर्म को धिक्कार है जो हमें सत्य की ओर जाने से रोके । क्या हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि हमें सत्यासत्य विवेक के क्षेत्र में सबसे अधिक उदार व विशाल हृदय होना चाहिए क्योंकि सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं होता।

मैं विचारता हूँ कि जिस दिन विष्व भर के धर्माचार्य पूर्ण निष्पक्ष होकर सत्य का ग्रहण व असत्य का परित्याग करने का सत्साहस करेंगे उस दिन संपूर्ण भूमण्डल पर एक सत्य धर्म का शासन होगा, एक ईश्वर की पूजा होगी । साम्प्रदायिक हिंसा, वर्गसंघर्ष, देशसंघर्ष आदि समाप्त होकर सारा विश्व परमपिता परमात्मा का एक परिवार बनने की दिशा में अग्रसर होगा परन्तु इसके लिए दूसरी ओर हमारे आधुनिक वैज्ञानिकों को भी यह सोचना होगा कि विज्ञान को तकनीक से कहाँ तक जोड़ना उचित व आवश्यक है, जिससे मानव व्यर्थ की स्पर्धा में फँसकर सर्वविध असंतोष में जलता हुआ चिन्ता अवसाद ईर्ष्या-द्वेष से ग्रसित होकर दुःखों से पीड़ित न होता रहे । पर्यावरण नष्ट भ्रष्ट होकर जीवों की प्रजातियां तक लुप्त न होती रहें । नये-नये रोग, जल, वायु का संकट न बढ़ता रहे । और इन सबके कारण संसार में भयंकर असंतोष, संघर्ष, कृत्रिम अभाव, आतंकवाद का जन्म न होता रहे । इस हेतु विज्ञान को भी सत्य धर्म से जुड़ना होगा । ऐसा करने से विज्ञान उपर्युक्त समस्याओं का जनक नहीं बनकर धर्म के साथ मिलकर मानवीय मूल्यों का संरक्षक बनेगा । पर्यावरण शुद्ध व सुरक्षित रहेगा । इसके लिए वैज्ञानिकों, समाज शास्त्रियों, साम्यवादियों अर्थचिन्तकों व राजनैतिकों को अपना दृष्टिकोण बदलने का साहस करना होगा । धर्म को नशा न मानकर सत्याचरण पर आधारित मानवीय मूल्यों का संरक्षक मानना होगा । धर्म को विश्वास की कल्पित वस्तु मानने के स्थान पर वैज्ञानिक सत्य पर सिद्ध मानना होगा । जिस दिन विज्ञान ऐसे सत्य धर्म को साथ लेकर अनुसंधान करेगा तब सारा विश्व भोगवाद की स्पर्धा को विकास नाम से सम्बोधित नहीं करके त्यागवाद में संतुष्ट रहकर आवश्यक, उपयोगी तथा निरापद आविष्कार ही करेगा । इससे न तो प्राकृतिक संसाधनों की न्यूनता होगी और न ही कृत्रिम अभाव एवं सामाजिक असमानताजन्य, अशान्ति व असन्तोष पनपेगा ।

इस प्रकार के सुखद समाज को बनाने की भावना ऋषियों की सदैव से रही है। ऋषि दयानन्दजी तो परमाणु से लेकर परमेश्वर तक का यथार्थ ज्ञान व उससे अपना व दूसरों का उपकार करना ही विद्वानों का कर्तव्य बताते हैं । पूर्वकालीन ऋषि, देवगणों में ब्रह्मा, मनु, भृगु, नारद, सनत्कुमार, मार्कण्डेय अगस्त्य, भरद्वाज, अत्रि, यास्क, गौतम, कणाद, कपिल, व्यास, पंतजलि, याज्ञवल्क्य, बृहस्पति, महादेव-शिव, विष्णु, राम, कृष्ण आदि हजारों महापुरूषों तथा मध्यकालीनों में आर्यभट्ट, भास्कराचार्य, ब्रह्मगुप्त आदि की

दृष्टि में सत्य धर्म तथा सच्चे विज्ञान का ऐसा ही आदर्श था जिस कारण तत्कालीन संसार में सुख-शान्ति का साम्राज्य था। उधर महान् विदेशी वैज्ञानिकों में सर अल्बर्ट आइंस्टाइन, सर आलीवर जोसेफ लॉज, प्रो. जान एमबोज फ्लेमिंग, प्रो. एडवर्ड हल, जान एलन हार्कर, प्रो. सिलवेनिस फिलिप्स आदि अनेक वैज्ञानिक विज्ञान व अध्यात्म के प्रबल समर्थक थे। मैं जब-जब सर आईस्टाइन के बारे में सुनता व जानता हूँ तब-तब मेरा मस्तक उस महान् व्यक्ति के सम्मुख श्रद्धा से झुक जाता है।

आज हमारे सममुख चुनौतीपुर्ण प्रश्न यह है कि आज जब विज्ञान व अध्यात्म दोनों अति दूर खड़े दिखाई दे रहे हैं, तब कैसे इन्हें साथ-साथ लाया जाये। मेरे मस्तिष्क व आत्मा ने विचारा कि क्यों न अपना जीवन इसी महान् मानवीय कार्य के लिए समर्पित किया जाये ? सत्य, वेद, धर्म के संस्कार आर्य परिवार के वातावरण से मिले। मेरे आदर्श स्वरूप ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों से पोषण मिला। इस समय कुछ वैज्ञानिकों व वैदिक विद्वानों का सद्भाव व सहयोग मिल रहा है। मैं आशा करता हूँ कि विश्व के अन्य प्रसिद्ध वैज्ञानिकों, दार्शनिकों, धर्माचार्यों व युवकों का भी ऐसा ही भाव मेरे प्रति बनेगा।

मेरे मित्र महानुभावो ! मैंने अब तक तो वेद धर्म को सत्य धर्म की सभी शर्तों पर स्वबुद्धि के अनुसार यथार्थ पाया है। इस कारण मैंने विचार किया है कि वैदिक वाङ्मय से विज्ञान के गूढ़ रहस्यों को खोजकर आधुनिक वैज्ञानिकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाये, वे उस पर प्रयोगशालाओं में अनुसंधान करें तो उन्हें जहाँ समय की बचत होगी वहीं उन्हें अनुसंधान हेतु नये-नये क्षेत्र प्राप्त हो सकेंगे। इसके साथ ही वैदिक विज्ञान की प्रामाणिकता भी उनकी दृष्टि में बढ़ेगी। मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि वर्तमान विज्ञान कई बिन्दुओं पर अपने को असहाय अनुभव कर रहा है। **मैं संकल्पित हूँ कि उस असहाय विज्ञान को वैदिक वैज्ञानिक रहस्यों के द्वारा नई दिशा प्रदान करूँ। मैं वेद को वर्तमान विज्ञान के पीछे नहीं बल्कि वर्तमान विज्ञान को वेद के पीछे चलाने की भावना रखता हूँ और मुझे विश्वास है कि मैं ऐसा कर पाऊंगा।** इससे उसकी श्रद्धा वेद की अन्य विद्याओं (यथा अध्यात्म, सामाजिक, राजनैतिक सिद्धान्त, अर्थशास्त्र आदि) पर भी होगी। प्रबुद्धजनों को इस बात का भी अनुभव होगा कि वेद वा वैदिक साहित्य किसी देश या वर्ग के लिए ही नहीं अपितु विज्ञानादि की भाँति समस्त सृष्टि के लिए हितकारी है। संसार को धीरे-धीरे इस बात का भी ज्ञान होगा कि वेद किसी देश वा वर्ग विशेष की संपदा नहीं बल्कि सभी

मानवों की सम्पत्ति है । वेद उस काल का है, जब हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, जैन, बौद्ध, पारसी, ताओ, यहूदी, साम्यवादी, नास्तिक आदि वर्ग बने भी नहीं थे । तब समस्त भूमण्डल पर सभी केवल मानव ही कहलाते थे । उस समय देशों का प्रादुर्भाव भी वर्तमान रूप में नहीं हुआ था । यह वेद ही समस्त ज्ञान-विज्ञान का मूल है, ऐसा जिस दिन सिद्ध हो जायेगा तो मुझे कोई कारण प्रतीत नहीं होता कि कोई प्रबुद्ध मानव इसे स्वीकार न करे । मेरे बन्धुवर ! जिस बात को मैं, यहां कह रहा हूँ उसे सिद्ध करना ही मेरे जीवन का लक्ष्य है । मेरा जीवन विश्व भर के प्राणि मात्र के समग्रहित चिन्तन के लिए है, न कि किसी मत पंथ का प्रचार करना मेरा प्रयोजन है । इसके लिए मैं धर्म व विज्ञान दोनों को परस्पर मिलाने के प्रयत्न का दृढ़ व्रती हूँ । विज्ञान से तात्पर्य सर्वत्र तकनीकी ज्ञान भी मैं ग्रहण नहीं करता । मैं समझता हूँ कि बेरोक व अनावश्यक तकनीक मानव को आलसी, भोगवादी गलाकाट-प्रतिस्पर्धी, अशांत व संघर्ष प्रिय बनाता है । मेरा ध्येय सृष्टि के गम्भीर व सूक्ष्म रहस्यों को जानकर महती चेतना परमात्मा की ओर विज्ञान को उन्मुख करना है। इससे मानव में आस्तिकता, दयाभाव, प्रेम, न्याय, सत्य आदि गुणों का उदय होगा । वह निरंकुश व स्वेच्छाचारी नहीं बनकर परमात्मा के आधीन चलेगा । इसी क्रम में परमाणु-नाभिकीय-कण-ब्रह्माण्ड-भौतिकी के गूढ़ तत्वों को वैदिक वाङ्मय से खोजना साथ-साथ आधुनिक विज्ञान की अवधारणाओं को समझना मेरी रूचि के विषय हैं । मेरी दृष्टि में उपर्युक्त विषय विज्ञान के सूक्ष्मतम विषय हैं, अन्य सभी विज्ञान इनसे किसी न किसी प्रकार जुड़े हुए हैं । मेरा मानना है कि उपर्युक्त विषयों में आधुनिक विज्ञान, वैदिक विज्ञान से कुछ नयी दिशा प्राप्त कर सकता है । ऊर्जा व द्रव्यमान के रहस्यों को समझना भी इसी क्षेत्र का विषय होगा । इसके आगे अनेक उपयोगी तकनीकी विषय भी अनायास ही प्राप्त हो सकेंगे, ऐसी मैं सम्भावना करता हूँ । आधुनिक विज्ञान उपर्युक्त विषयों में क्या-क्या भूल कर रहा है ? तथा वर्तमान व मध्यकालीन वैदिकों ने क्या-क्या भूलें वैदिक ज्ञान को समझने में की है, या कर रहे हैं, इसका भी कुछ-कुछ अनुमान मेरे मस्तिष्क में हो रहा है व होता भी जायेगा ऐसा विश्वास है । इसका कुछ संकेत वेद विज्ञान शोध प्रक्रिया नामक अध्याय में किया गया है । मुझे इस दिशा में कार्य करते लगभग चार वर्ष ही व्यतीत हुये हैं । सृष्टि के मूल विषय पर अल्पचिन्तन से एक पुस्तक प्रकाशित की है। पुस्तक अति संक्षेप में है । यह पुस्तक हमने अपना कार्य प्रारम्भ करते ही २००५ सन् में प्रकाशित की थी । आज मैं स्वयं उसमें अनेक अपूर्णतायें व न्यूनतायें पा रहा हूँ ।

भले ही वैज्ञानिकों वा वैदिक विद्वानों को उसमें ऐसा कुछ नहीं मिला । हाँ, एक दो मित्रों ने जिन न्यूनताओं के बारे में बताया परन्तु वे न्यूनतायें नहीं है बल्कि संक्षेपजन्य अस्पष्टता है । अभी उस विषय में विस्तृत व सुस्पष्ट लिखने का मेरे पास अवकाश नहीं है । आगे चलकर उस विषय पर अभी बहुत आगे बढ़ने का प्रयत्न करना है । उपर्युक्त सभी विषयों के गूढ़ चिन्तन को आगे बढ़ाते हुये एक विशाल ग्रन्थ के रूप में इसे लाकर संपूर्ण सृष्टि प्रक्रिया तक आना है, निश्चित ही तब उपर्युक्त सभी विषयों के साथ मौसम विज्ञान पर्यावरणादि विषयों में एक क्रान्तिकारी आयाम जुड़ेगा ऐसा मेरा प्रभु कृपा से विश्वास है। मेरा विचार है कि यदि पूर्ण निश्चिन्तता पूर्वक मेरी समयावधि तक स्वस्थ रहते हुए इसी दिशा में प्रयत्नशील रहा, साधन, सहयोग मिलते रहे तो संसार में एक अभूतपूर्व कार्य होगा । परन्तु मैं आप सबके सम्मुख यह वचन तो नहीं दे सकता कि ऐसा मैं अवश्य ही कर सकूँगा परन्तु यह अवश्य कह सकता हूँ कि पूर्ण ईमानदारी व निष्ठा से सामर्थ्यानुसार प्रयत्न करूँगा, अपने संकल्प के अनुसार दृढ़ता से सत्य का ही पालन करूँगा ।

प्यारे भाइयो ? मेरे हृदय में तीव्र इच्छा सदैव यह भी रहती है कि संसार का प्रत्येक मानव सत्य का प्रबल पक्षधर व अन्वेषक बने । यदि ऐसा न कर सके तो सत्य अन्वेषण में स्वसामर्थ्यानुसार सहयोग तो करे ही । यदि सहयोगी भी नहीं बन सके तो कम से कम किसी पूर्वाग्रह, दुराग्रह, पद–प्रतिष्ठा धन की लालसा में अथवा अनेकता में एकता की भ्रान्त धारणा, कल्पित भ्रान्त मानवता, मिथ्याधारित राश्ट्रियता, मिथ्या सैक्यूलरिज्म के वशीभूत होकर सत्य का विरोधी तो नहीं बने । प्रत्येक मानव को यह बात हृदय की गहराइयों तथा मस्तिष्क के चिन्तन की ऊँचाइयों से विचारनी चाहिए कि सत्य धर्म तथा विज्ञान दोनों को ही कोई भौगोलिक सीमा नहीं होती । तब नस्ल, भाषा, वर्ग, सम्प्रदाय का भेद तो नितान्त भ्रमक कल्पना है, यद्यपि मैं यह स्वीकारता हूँ कि कुछ बातें देश काल परिस्थिति के अनुसार बदल भी जाती हैं, परन्तु इसी तर्क पर भिन्न-भिन्न परस्पर विरूद्ध विचारों को सत्य मान लेना सत्य के साथ घोर अन्याय है । ईश्वर के नियम सार्वदेशिक, शाश्वत तथा सर्वहितकारी होते हैं । ईष्वर एक है, उसकी व्यवस्थायें भी एक ही है, चाहे वे भौतिक क्षेत्र में हों अथवा आध्यात्मिक क्षेत्र में । उन्हें ही सत्य धर्म तथा वास्तविक विज्ञान कहा जा सकता है और उसी सत्यमार्ग पर मानव मात्र को प्रवृत्त करना मेरा ध्येय है । मैं संसार भर के विद्वानों, वैज्ञानिकों, दार्शनिकों व धर्मानुरागियों के स्नेह

व सहयोग का अभिलाषी हूँ । इसके साथ ही मैं विश्वभर के प्रबुद्धजनों, प्यारे छात्र-छात्राओं, पत्रकारों, शिक्षाविदों, समाज-शास्त्रियों, अर्थ-शास्त्रियों, राजनेताओं, उद्योगपतियों, व्यापारियों, कृषकों, श्रमिकों, नास्तिकों, साम्यवादियों या अन्य किसी भी क्षेत्र के प्रतिभाशाली युवाओं का आह्वान करता हूँ कि वे मेरे विचारों व उद्देश्य पर एक बार शान्त व निष्पक्ष हृदय एवं प्रखर तार्किक मस्तिष्क से गम्भीरता से विचार करे । यदि उनके निष्पक्ष आत्मा को यह मार्ग सत्य व हितकारी प्रतीत होवे तो अपने - अपने ढंग से यथेष्ट सहयोग करें व करावें ।

आइये ! मेरे विश्व भर के मित्रजनो । हम सब मिलकर इस पृथिवी को परमात्मा का एक परिवार मानकर वेद के शब्दों में कहें -

संगच्छध्वं संवदध्व .... समाने मंत्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्त्मेषाम् .... (ऋग्वेद) ।

अर्थात् हम सब मानव प्राणिमात्र के कल्याणार्थ साथ-साथ चलें, समान विचार वाले बनें, हमारी मन्त्रणायें, सभायें, मन, चित्त, हृदय सभी समान भाव रखने वाले हों । कोई भी परस्पर विरोधी न रहे, जिससे संसार में सर्वत्र शान्ति, आनन्द, भातृभाव का सुखद साम्राज्य होवे ।

इन्हीं कामनाओं व भावनाओं के साथ...

वेद में विज्ञान के सांकेतिक सूत्रों को जानने के लिये महर्षि दयानन्द कृत

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका

अवश्य पढ़ें ।

।। ओ३म् ।।

सभी वेदभक्त भाइयों की सेवा में

अन्तर्वेदना ! भीष्म संकल्प

मेरे वेदानुरागी बन्धुओ एवं वैदिक विद्वज्जनो ! हमारे मंत्रद्रष्टा ऋषियों की यह घोषणा सदैव ही रही है कि वेद ज्ञान-विज्ञान का मूल होने के साथ-साथ ईश्वरीय ज्ञान भी है । चतुर्वेदविद् ब्रह्मा ऋषि से लेकर ऋषि दयानन्द पर्यन्त ऋषि-मुनियों तथा अन्य सभी महापुरूषों की भी यही मान्यता रही है । वेद को स्वतः प्रमाण तथा अन्य आर्ष ग्रन्थों को परतः प्रमाण मानना सनातनी परम्परा रही है ।

-: पतन का मूल कारण :-

दुर्भाग्यवशात् महाभारत से कुछ पूर्व विश्व में वेद के नाम पर कुछ विकृतियां भी जन्म लेने लगी । इसके अनन्तर वेद केवल कर्मकाण्ड तक ही सीमित रह गया और उस वैदिक कर्मकाण्ड के नाम पर मांसाहार, व्यभिचार, पशुबलि, नरबलि, स्त्री व शूद्र वर्ग के प्रति वीभत्स व्यवहार, मदिरापान आदि अनाचार इस देश में फैल गया । एक ईश्वर के स्थान पर कल्पित बहुदेववाद प्रचलित होकर विश्व में सहस्त्रों मत मतान्तर परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया में उत्पन्न हो गये । इनमें से कुछ मत वेद वा आर्षग्रन्थों के नाम पर उनकी मिथ्या व्याख्या पर आधारित थे तो अन्य मत जैसे पारसी, यहूदी, ईसाई, चार्वाक, मुसलमान, जैन, बौद्ध आदि मत वैदिक कर्मकाण्ड की प्रतिक्रियावश इनके विरोध में उत्पन्न हुये । इधर वैदिक विद्वान् कहाने वालों ने वेद का आर्षशैली विरूद्ध मिथ्यार्थ करके तथा मनुस्मृति, रामायण, महाभारत, गृह्यसूत्र आदि में अश्लील, अवैज्ञानिक व मानवता विरोधी मनमाने प्रक्षेप करके उपरिवर्णित पापों को बढ़ाने हेतु सत्य सनातन वैदिक धर्म के स्थान पर शैव, शाक्त, वैष्णव, वाममार्ग (जो अतिभ्रष्ट मार्ग था) अद्वैत, द्वैत आदि अनेकों मत चला दिये । दुर्भाग्य यह था कि ये सारे पाप परमात्मा तथा परमात्मा के ज्ञान वेद तथा सकल मानव जाति के सदा हितैषी पवित्रात्मा ऋषियों, देवों तथा अन्य महापुरूषों के नाम पर हुये तथा अपने-अपने मतों को सब सनातन धर्म होने का दावा

करने लगे। जिस महाभारत से पूर्व भले ही राक्षस, असुर आदि जातियों में मदिरा, मांस आदि का वीभत्स प्रयोग होता था, यहाँ तक कि मानव-मांस भी खा जाया करते थे परन्तु वेद के नाम पर कोई सम्प्रदाय उन दिनों शायद प्रचलित नहीं हुआ परन्तु महाभारत के बाद मतों-सम्प्रदायों की बाढ़ आ गयी। इतने पर भी सभी नाम से वैदिक व आर्य सनातनी ही कहाते थे। इन पापों की प्रतिक्रिया में ही कुछ महापुरूषों ने अपने-अपने विचारों का स्वतन्त्र रूपेण प्रचार समाज सुधार हेतु प्रारम्भ किया। उनके विचारों का आधार पूर्णतया वेद नहीं था। वेदाध्ययन का अधिकार जन्मना ब्राह्मणों तक ही सीमित रह गया और वह भी वेदपाठ तथा कर्मकाण्ड तक सीमित रह गया। इस कारण इन सन्तों के शिष्यों ने उनके नाम से नये मत चला दिये। इनमें प्रमुख मत हैं - कबीर पंथ, सिख पंथ, दादू पंथ, राधास्वामी, जैन व बौद्ध आदि। अन्य पंथों का प्रायः वैदिक धर्म से कहीं न कहीं अपेक्षाकृत विशेष जुड़ाव था। ये सारे मत निरन्तर धीरे-धीरे हिन्दू धर्म नामक नये नाम से प्रसिद्ध हो गये। जो ब्राह्मण ग्रन्थ "पुराण" नाम से जाने जाते थे तथा जो ऋषियों के वेद व्याख्यान ग्रन्थ थे, उनमें भी अनेक प्रक्षेप हुये साथ ही अपनी कल्पना तथा कुछ ब्राह्मण-ग्रन्थों व वेदों के आख्यानों के मिथ्यार्थ के आधार पर अन्य नवीन पुराणों की रचना भी इसी संक्रमण काल में हुयी जिनके रचयिता संस्कृतज्ञ आचार्य थे। इनका रचयिता कोई एक आचार्य न होकर अनेक विद्वान् समय-समय पर लिख-लिख की बढ़ाते गये जिनमें अनेक विचार वेदानुकूल, वैज्ञानिक व ऐतिहासिक थे परन्तु अनेक बातें भयंकर अश्लील, अमानवीय व कल्पित अवैज्ञानिक भी थीं। पुराण रचयिताओं ने संसार में प्रसिद्धि यह की कि सभी महापुराण महर्षि वेदव्यासजी की रचना है ताकि इन्हें जनसामान्य प्रमाण मान सके। इन पुराणों तथा आर्ष ग्रन्थों के प्रक्षिप्त-भाग पर दृष्टिपात करें तो कोई ऐसा पाप नहीं जिनकी प्रेरणा इन ग्रन्थों से नहीं मिलती हो। उपर्युक्त सब पापों की जड़ ही ये ही हैं। ऋषियों में विश्वामित्र, वशिष्ठ, पराशर, ब्रह्मा आदि देवों में विष्णु, महादेव, इन्द्र, चन्द्र, बृहस्पति आदि अन्य महापुरूषों में राम, कृष्ण आदि को कामी, क्रोधी, हिंसक, शराबी इन ग्रन्थों ने बताया है। कौन ऐसा ऋषि, देव आदि हुआ है जिसको चरित्रहीन न बताया हो? ऋषियों को गोमांस भक्षक तक बताया। शोक है कि जो धर्म सबको उच्च ब्रह्मचर्य, सदाचार व विश्वबन्धुत्व की शिक्षा देने वाला, ज्ञान - विज्ञान का स्रोत था, वही धर्म हमारे तथाकथित धर्माचार्यों को कामी - पापी व अविद्याग्रस्त बनाने का साधन बन गया। श्री कृष्ण के नाम पर कितनी

सतियों का सतीत्व इनके भक्त कहाने वाले कितने ही नकली धर्माचार्यों ने राधा, गोपियां तथा कुब्जा की कामुक लीलायें सुना-सुनाकर लूटा होगा। कितने ही शिव भक्त, मन्दिरों में भांग, गांजे, तम्बाकू, अफीम, चाय और कहीं-कहीं मदिरा के नशे में चूर रहते हैं। कितने ही भक्तों ने पूजा के नाम पर निरीह जानवरों की गर्दन पर छुरियाँ चलायी है। फिर मुसलमान की कुर्बानी को ही बुरा क्यों कहें ? हाँ वे मुसलमान इनसे बढ़कर अवश्य हैं। मेरे भाइयो सोचो ! महाविद्वान् हनुमान तथा नीतिज्ञ जाम्बवान् जैसों को बन्दर व भालू कहकर किसने उपहास का पात्र बनाया ? नारद जैसे महाविज्ञानी का नाम चुगलखोर के रूप में किसने प्रसिद्ध किया ? वशिष्ठ व विश्वामित्र को परस्पर द्वेषी व क्रोधी किसने बताया ? ब्रह्मा जैसे महावेदवेत्ता ऋषि को स्वपुत्री के साथ दुष्कर्मकर्त्ता किसने लिखा ? श्रीराम जैसे सर्वभूतहितैषी महामानव को निर्दोष शम्बूक–हन्ता तथा निर्दोष सीता का निष्कासक किसने कहा ? महादेव शिव जैसे महान् योगी को नशे में मदमस्त रहने वाला तथा दारूवन में घोर शर्मनाक अश्लील कर्मकर्ता किसने कहा ? विष्णु पर चरित्रहीनता, क्रोध तथा बार–बार पाप करके ऋषियों के शाप से पीड़ित रहने तथा वीरभद्र से मार खाने का दोष किसने लगाया ? भगवान् मनु जैसे सकल शास्त्रज्ञ मानव हितैषी को दलित व स्त्री विरोधी किसने सिद्ध किया ? खजुराओं जैसे मन्दिरों में धर्म के नाम पर अश्लील मूर्तियों का पूजन किसने प्रारम्भ कराया ? श्रीकृष्ण जैसे योगी ही नहीं बल्कि योगेश्वर को चोर जारशिखामणि, मामी राधा का प्रेमी, तस्कर, बलात्कार कर कुब्जा का हन्ता आदि नामों से किसने बदनाम किया ? अरे जरा शिवलिंग पूजा की उत्पत्ति का विधान अपने ग्रन्थों में पढ़कर तो देखो, लज्जा को भी डूब मरने का स्थान नहीं मिलेगा। मेरे भाइयो ! मेरा निवेदन है कि आप स्वयं अपने महापुराण कहलाने वाले ग्रन्थों को एक बार पढ़कर अवश्य देखें। मेरा दावा है कि आप स्वयं रो पड़ेंगे और मेरी पीड़ा में सहभागी बनेंगे। जो कथावाचक वा लेखक विद्वान् पुराणादि की अश्लील व असम्भव कथाओं की आध्यात्मिक वा वैज्ञानिक मनोहारी व्याख्या नादान जनता के सम्मुख करके उल्टा हम आर्य विद्वानों को ही अज्ञानी बतलाते हैं, उनसे मेरा विनम्र निवेदन है कि वे मेरे वा किसी वैदिक विद्वान् के सम्मुख बैठकर प्रीतिपूर्वक संवाद करके अपनी व्याख्या करने का कष्ट करें। क्या वे हर अश्लील व असम्भव कथा की ऐसी व्याख्या व्याकरणादि शास्त्रों तथा पूर्वापर प्रसंगों के आधार पर कर सकते हैं ?

क्या इस प्रकार की व्याख्या (अनेक विद्वान् रामायण, गीता व महाभारत आदि ऐतिहासिक ग्रन्थों की भी ऐसी ही व्याख्या करते हैं) करने वालों ने कभी विचार किया कि इस प्रकार की व्याख्या नहीं बल्कि वाक्छल से आप आरोपों से बचने का असफल प्रयास अवश्य कर लें परन्तु इससे श्रीराम, श्रीकृष्णजी, हनुमान्, महादेव आदि का इतिहास मिट गया है और जो कोई इन्हें मानता भी है, वह भी इनके इतिहास को भुला देगा तब आप किस पर गर्व करेंगे ?

मेरे देवों, ऋषियों व आर्यों के वंशज मेरे प्यारे भ्राताओ ! इन पापों को लेकर कोई ईसाई, मुसलमान, कामरेड अथवा अत्याचारों का मारा कोई दलित हमारे ऋषि, मुनियों, वेदों पर आपत्तिजनक कुछ लिख देता है, उन्हें गाली देता है, मनु को पापी कहता है तो आप तुरन्त भावनाओं के ज्वार में भोली धर्मभीरू जनता को बहा देते हैं, तोड़-फोड़, धरने, प्रदर्शन पर उतर पड़ते हैं । इसे धार्मिक भावनाओं को आहत करने वाला मानते है। । बेचारी भीड़ को पता ही नहीं है कि ये सारे पाप उसके ग्रन्थों में ही लिखे हैं जिन ग्रन्थों को उस जनता ने कभी पढ़ा ही नहीं, तो कुछ को पढ़ने से वंचित कर दिया है । वेद को कपड़े में लपेट कर मन्दिर में पूजा करने मात्र के लिए रखा है । स्त्री व शूद्र को सदियों तक इसको पढ़ने व सुनने के अधिकार से वंचित रखा । आप आरोपी के आरोपों का उत्तर देने का साहस नहीं कर पाते । आपके धर्माचार्य मौन साध लेते हैं ।

-: उठो, जागो और सत्य को स्वीकार करने का साहस करो :-

अरे बड़ी-बड़ी भीड़ को भागवतादि की कथा सुनाने वाले कथावाचक भाइयो ! आप तो कम से कम इन दोषों से कुछ अवगत होंगे ? अरे कथाओं के नाम पर यश व धन बटोरने में दक्ष मेरे बन्धुओ ! **क्या आप भागवत, ब्रह्मवैवर्त वा शिवपुराणादि की अश्लील कथाओं को मंच पर अथवा अपने पुत्र-पुत्रियों को यथावत सुनाने का हृदय रखते हो ? आप तो परमात्मा से डर कर हमारा दर्द सुनो ! बड़े-बड़े शंकराचार्य महामण्डलेश्वर कहाने वाले आदरणीय महानुभावो ! आप तो शास्त्रों से कुछ परिचित हो।** आप तो साहस करके इन ऋषियों, देवों व महामानवों पर लगे मिथ्या पाप को धो डालने में सकल महर्षिमण्डल, देवमण्डल व भारतीय महामानवों के इतिहास के सत्यार्थ के प्रचारक व उद्धारक, सकल शास्त्रज्ञ, मानवताहितैषी, स्वराज्य के प्रथम मन्त्र दाता होते हुये भी विश्व बन्धुत्व के प्रचारक महान् गोभक्त योगीराज ऋषि दयानन्द सरस्वती का अनुयायी बनने का साहस करो । संसार में एक मात्र वैदिक सत्य सनातन धर्म के साम्राज्य हेतु सकल

मानवता के कल्याणार्थ तथा विशुद्ध राष्ट्रवाद की स्थापना हेतु आप और हम आर्यजन मिलकर काम करें। आप व हम दोनों ही वेदभक्त, देव तथा ऋषियों के वंशज हैं। आओ! अपने को सनातनी कहने वाले मेरे भाइयो ! सोचो कि सनातन तो केवल वेद है जिसे ही सभी ऋषियों-देवों तथा भूमण्डल के महामानवों ने अपना आदर्श आधार माना था। जिसका आदर्श महाभारत के पश्चात् समाप्त हो गया था, उसे ही ऋषि दयानन्द ने याद दिलाते हुये कहा था "हे भूमण्डल के मानवो ! वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। यही ईश्वरीय ज्ञान है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद चार संहितायें ही वेद है। इन्हें पढ़ने-सुनने का मानव मात्र को अधिकार है। हर आर्य (श्रेष्ठ-सदाचारी) पुरूष का परम धर्म वेद पढ़ाना व पढ़ना है।" मेरे सनातनी कहाने वाले भाइयो ! सोचो ! कि आप इस घोषणा में क्या ऐसा पाते हैं, जिससे आर्य समाज तथा दयानन्द से दूर रहना चाहते हैं ? क्या आप नहीं चाहते कि वेद की प्रतिष्ठा फिर से विश्व में स्थापित होवे ? क्या आप नहीं चाहते कि संसार के सात अरब मानव वेद भक्त बनें, अवैदिकता संसार से समाप्त हो ? क्या आप नहीं चाहते हैं कि सम्पूर्ण विश्व एक 'ओ3म्' की उपासना करे ? क्या आप नहीं चाहते हैं कि ऋषियों व वेदों पर फैली उपरिवर्णित गन्दगी को साफ किया जाये ? क्या आप नहीं चाहते हैं कि हमारे पूज्य ऋषि-मुनियों, ब्रह्मा, महादेव, विष्णु आदि देवों तथा मनु, राम कृष्णादि महापुरूषों के उज्ज्वल चरित्र को विश्व में पूजा जाये, इन पर कोई कलंक लगाने की नादानी न करे, विश्व के सभी मानव ऋषियों को अपना पूर्वज मानकर इनके आदर्शों का अनुकरण करे ? क्या आप नहीं चाहते हैं कि जो भारतीय इतिहास चमत्कारों, अलंकारों के पत्थरों में दब गया है, हमारे रामायण, महाभारत को कल्पित कहानियाँ बताया जा रहा है, वे ग्रन्थ कल्पित व दूशित कथाओं से मुक्त होकर विश्व की ऐतिहासिक सम्पदा के रूप में प्रसिद्ध हो सकें, विश्व के सब लोग गर्व से आर्य कहना प्रारम्भ करें ? क्या आप नहीं चाहते हैं कि वैदिक ज्ञान व विज्ञान आधुनिक विकसित विज्ञान को नयी दिशा दे सके और हम लोगों का सोया व मृत स्वाभिमान जाग्रत हो सके ? हमारा देश पुनः चक्रवर्ती राष्ट्र तथा जगदूगुरू का स्थान प्राप्त कर सके ? यदि हाँ, तो प्यारे मित्रो ! आइये! हमारे साथ कंधा से कंधा मिलना चलना प्रारम्भ करें। ऋषि दयानन्द रूपी प्रवेश द्वार से प्रविष्ट होकर वैदिक वाङ्मय तथा दैवी संस्कृति के दिव्य दर्शन करने में हम सब मिलकर प्रयत्नशील हों, जिससे पुनः राम राज्य साकार हो सके।

मेरे प्यारे वेद भक्तो ! आप अब यह समझ गये होंग कि उपर्युक्त सभी समस्याओं की जड़ यह है कि देश व विश्व वेद के सत्य स्वरूप को भूल चुका था । यदि ऐसा नहीं होता तो जिस वैदिक युग का सुचलन विश्व में करोड़ों वर्ष से चल रहा था, वह इन पाँच हजार वर्ष मात्र में धूल-धूसरित नहीं हो गया होता । सबने वेद को पीछे छोड़कर अथवा मिथ्यारूप से ग्रहण कर संसार को सुधारने का प्रयास किया, इसी कारण ये प्रयास शान्तिविधायक एवं मानवता के हितैषी सिद्ध नहीं हो सके । विश्व के अधिकांश मानव यह स्वीकार करने को तैयार ही नहीं होंगे कि वे भी वैदिक पूर्वजों के ही वंशज हैं ।

-: निवेदन इस्लामी, ईसाई व अन्य मतावलम्बियों से :-

मैं मुसलमान भाइयों से पूछता हूँ कि वे जिस वेद को काफिरों का ग्रन्थ तथा वैदिकों को काफिर कहते हैं उनके कुरआन ग्रन्थ में क्या नहीं लिखा है कि पूर्व में सभी मनुष्यों का एक ही मत था ? अनेक मत धीरे-धीरे बाद में उत्पन्न हुये हैं । क्या आप बतायेंगे कि वह एक मत कौन सा था ? क्या वेद से पुराना कोई ग्रन्थ आज तक किसी ने सुना व पढ़ा है ? तब क्या आप उसी मत की संस्थापना में हमारा साथ नहीं देंगे? जिन बुराइयों की प्रतिक्रियावश जो-जो मत चले, क्या उन मतों के अनुयायियों को नहीं चाहिये कि ऋषि दयानन्द जैसे वेदोद्धारक व मानवता प्रचारक के आने से वे बुराइयाँ स्वयं समाप्त हो गयी वा उनका ज्ञान हमें होने लगा है तब उनकी प्रतिक्रिया में जन्में मतों का अब औचित्य ही कहाँ रहा ? जब एकेश्वरवाद वेद में है ही, तब कुरआन, बाइबिल को अलग से चलाने की आवश्यकता ही कहाँ ? फिर क्या इनके नाम पर हिंसा, कब्रपूजा, मांसाहार जैसे घातक पाप नहीं हो रहे हैं ? क्या मानवता का खून इनके नाम पर नहीं बहाया गया है ? क्या प्रेम व भाईचारे का सन्देश वेद से अच्छा कहीं मिल सकता है ? मेरे ईसाई व मुसलमान भाइयो ! क्या आपके ग्रन्थों की कथायें विज्ञान व बुद्धि की कसौटी पर खरी सिद्ध होती हैं ? आज जब बलि तथा मांसाहार आदि कथित धर्मानुमोदित पापाचार समाप्त हुआ तो इसकी प्रतिक्रिया में जन्मे जैन, बौद्ध मत की संसार को आवश्यकता क्या है, जिसमें ईश्वर का अस्तित्व तक नहीं माना जाता । जिनके ग्रन्थों में अनेक अवैज्ञानिक कथायें भरी पड़ी हैं । जैन ग्रन्थों को भी दोष छिपाने के उद्देश्य से जन सामान्य से दूर रखा जाता है। क्या यह जैन साधुओं की सत्य पराणयता कही जायेगी ? मेरे भाइयो ! जिस अहिंसा को परम धर्म आपके मत में माना गया है, उस अहिंसा का मूल स्रोत वेद

है । पांतजल योगदर्शन में इसे सबसे प्रथम साधन तथा महाव्रत कहा है । सच्चाई यह है कि आप 'अहिंसा' शब्द के अर्थ को ठीक-ठीक नहीं जान पाये जिससे कायरता वा दुष्ट को सदैव क्षमा करने रूपी मिथ्या अहिंसा के व्यवहार ने इस देश को पराधीन बनाकर नष्ट-भ्रष्ट कर डाला । जबकि वेदानुमोदित अहिंसा का तात्पर्य है-प्राणिमात्र के प्रति प्रेम, वैरत्याग तथा न्यायार्थ दुष्ट को उचित दण्ड, निष्काम व निष्पक्ष भावना से देना । महात्मा बुद्ध व महामना महावीर जैसे महापुरूष वेद का यथार्थ नहीं समझ पाये इसी कारण वे वेद को उचित महत्व नहीं दे सके तथा यज्ञ के नाम पर पशुबली को देखकर वे पवित्रात्मा वेद के ही विरोधी बन गये । इसमें ऐसा कोई दोष नहीं था, बल्कि वेद के प्रति अज्ञानता ने ही उन्हें ऐसा करने को बाध्य किया और तत्कालीन ब्राह्मणों ने वेद के ऐसे वीभत्स रूप को ही संसार में प्रचारित कर रखा था । सच्चे ब्राह्मणों का अभाव हो गया था इससे वेद का यथार्थ लुप्त हो चुका था । परन्तु आज वेद का कुछ प्रकाश हुआ है । अब तो आप कुछ विचारो ! इसलिये भूमण्डल के मानवो ! आओ ! ईश्वर एक है, हमारे शरीर एक जैसे हैं, प्रकृति सबके लिये एक है, तब एक धर्म जो सनातन-सत्य वैदिक है, के ही अनुयायी बनने का व्रत लो, जिसका सत्य स्वरूप ही हजारों वर्ष पश्चात् ऋषि दयानन्द ने बतलाया था । कारण मिटने पर कार्य भी मिटना चाहिये । मेरे मित्रो ! बार-बार ऋषि दयानन्द की बात इस कारण कर रहा हूँ कि इनके अतिरिक्त और कोई महापुरूष पिछले कुछ हजार वर्षों में दिखाई नहीं देता जिसने सत्य के ग्रहण और असत्य के परित्याग की इच्छा से भारत के सभी मतों के विद्वानों को संवाद हेतु आह्वान किया तथा स्वयं ने सत्य जानकर ही वेद को स्वतः प्रमाण के रूप में ग्रहण किया तदुपरान्त जिसने केवल वेद को अपना आदर्श व आधार बनाया । वे जानते थे, "यदि वेद से हटकर कुछ भी अपना पाठ पढ़ाने का प्रयास किया गया तो आर्य समाज भी मेरे नाम पर चला एक सम्प्रदाय बनकर रह जायेगा । जिस साम्यवाद रूढ़िवाद के जाल में मैं मानवता को मुक्त कराना चाहता हूँ वह होना तो दूर यह आर्य समाज भी स्वयं एक सम्प्रदाय बन जायेगा ।" इस कारण उन्होंने वेद को ही आधार बनाया, जो उनका विगत कुछ (ऋषि परम्परा नष्ट होने के पश्चात्) हजार वर्षों में जन्मे महापुरूषों से वैशिष्ट्य था । हाँ बीच में आद्य शंकराचार्य महाराज भी इसी भावना से बढ़े थे परन्तु अल्पायु में संसार से विदा हो जाने से वे वेद का काम नहीं कर सके तथा उनके भाव को उचित ढ़ंग से नहीं समझ पाने के कारण

उनके भक्तों ने अद्वैतवाद नामक नया ही सम्प्रदाय चला दिया ।

-: आर्य समाजी भाइयो ! जरा सोचो कि आप कहाँ हो ? :-

मेरे आर्य विद्वज्जनो ! मुझे खेद है कि ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना करते समय जो आशंका व्यक्त की थी, वह आज सच होती प्रतीत हो रही है । आज आप न केवल पौराणिकों अपितु महादेव, विष्णु, ब्रह्मा, नारद, इन्द्र जैसे महापुरूषों की भी कटु आलोचना करने लगते हैं । क्या आप इनके पौराणिक स्वरूप के खण्डन के साथ महाभारत आदि ग्रन्थों में बताये गये इनके उज्ज्वल स्वरूप को कभी बताते हैं ? क्या आपने ऋषि दयानन्द से महान् प्राचीन ऋषि–महर्षियों को नहीं भुला दिया है ? क्या आप ऋषि दयानन्द रूपी दीपक के प्रकाश में पूर्व ऋषि–मुनियों और देवों की महानता को समझने का प्रयास करेंगे ? यदि नहीं तो मैं दृढ़ता से कहूँगा कि आप दयानन्द को समझ नहीं पाये । मेरे आर्य बन्धुओ ! आज आपके ऊपर ऋषि दयानन्द का अनुयायी होने के कारण सृष्टि के आदि काल से लेकर अब तक सभी महापुरूषों की विश्ववारा संस्कृति तथा वैदिक ज्ञान विज्ञान को बचाने का अन्यों की अपेक्षा अधिक गुरूतम दायित्व है । आज आपको भी अपने अन्दर झाँककर देखना है कि आपने भी इस दायित्व को कितना निभाया है ? ऋषि दयानन्द के विराट् व्यक्तित्व को लोभ-लालच, हठ, दुराग्रह व अविद्या से ग्रस्त अन्य साम्प्रदायिक आचार्य, मौलवी, पादरी, ग्रन्थी, सन्त-महन्त तो नहीं समझे परन्तु आपने कितना समझा है ? आपने ऋषि को केवल सुधारक समझा इसी कारण समाज सुधार क्षेत्र में कूद पड़े और वेद का कार्य छूट गया । देश को स्वतन्त्र कराने में सारी शक्ति लगा दी । देश ने अनेक आर्य वीर पुरूषों की बलि लेकर स्वतन्त्रता का लाभ भी लिया परन्तु स्वतन्त्र देश में आर्य समाज के त्याग को पूर्णतः भुला दिया । न केवल भुला दिया अपितु आर्य समाज के छूआछूत-विरोधी-आन्दोलन, लोकतन्त्र, पर्दाप्रथा, समाजवाद, स्त्रीशिक्षा आदि के कार्यों के सुपरिणाम के स्थान पर देश के वोटों के व्यापारियों तथा पाश्चात्य कुसभ्यता के दासों ने जातिवादी विघटन, आरक्षण रूपी विषवपन, गुणविरोधी केवल गणपूजन, भीड़तन्त्र, नशाखोरी, अश्लील अंगप्रदर्शन व उन्मुक्त यौनाचार व इसके विज्ञापन, योग्यता का हनन, पारिवारिक विध्वंस आदि दुष्परिणाम यह देश भोग रहा है । परन्तु कोई राजनैतिक दल अपने स्वार्थ के कारण इस भयंकर समस्या को समस्या ही नहीं मानता बल्कि इसे समाज कल्याण की दवा मानता है । आज अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के नाम

पर इस देश में क्या-क्या पाप नहीं हो रहा है ? हर व्यक्ति स्वतन्त्र नहीं बल्कि उन्मुक्त है, उन्मत है एवं स्वछन्द है । मेरे देशभक्त भ्रातागण ! मैं इस पर गहराई से सोचता हूँ तो मेरा आत्मा कराह उठता है । इस जलते राष्ट्र, उजड़ते समाज व टूटते परिवारों को कौन बचायेगा ? इस सब नाश का क्या कारण है ? समाज-राष्ट्र सुधार के उपाय करते-करते यह कुफल क्यों निकला ? कहाँ व क्या भूल हुयी, मेरा विश्वास है कि हम लोगों ने वेद की ओर नेत्र बंद करके समाज सुधार व देश को स्वतन्त्र कराने में सारी शक्ति लगा दी। जिस वेद को ऋषि ने अपना प्राण माना था, उस प्राण का हनन हम आर्यों ने कर डाला तथा जो वेद का काम हुआ भी वह भी मात्र साधारण उपदेश तक ही सीमित रह गया। जो वेद पौराणिकों के लिये पाठ करने तथा कर्मकाण्ड करके दक्षिणा लेने मात्र का साधन बन गया था वही वेद हम आर्यों के लिये आचार, समाज, अध्यात्म आदि विषयों पर सुन्दर प्रवचन करने तक ही सीमित रह गया है । पौराणिकों के परम्परागत वेदपाठियों ने अपने कण्ठ में वेद को उस बर्बर मुस्लिम काल में भी सुरक्षित रखा था, इसके लिये सारा वेद भक्त समाज उनका चिरऋणी रहेगा । मैं उन दिवंगत वेदपाठियों को सश्रद्ध नमन करता हूँ परन्तु ऋषि दयानन्द ने जिस वैदिक स्वरूप को संसार में प्रतिष्ठित करने का महान् दायित्व हमें सौंपा था, उसे हम आर्य समाजी कहाने वाले नहीं निभा सके । हम आर्य लोग स्वयं को हिन्दू नाम से सम्बोधित करने लगे थे, वे हिन्दू पाश्चात्य शिक्षा की चकाचौंध से भयभीत होकर दीन–हीन बन गये थे, उनको सत्य वेदार्थ का दर्शन कराके उनमें नव स्वाभिमान का संचार करने का दायित्व ऋषि ने हमें सौंपा था और न केवल ऐसा करना अपितु पाश्चात्यों, मुस्लिमों तथा सभी मानवों को भी वेद का सत्य स्वरूप समझाकर उन्हें भी वैदिक ऋषियों का वंशज सिद्ध करके, वैदिक तथा आधुनिक भौतिक विज्ञान का समन्वय सिद्ध कर न केवल ऐसा करके बल्कि वेद में सभी ज्ञान–विज्ञान का मूल सिद्ध करके उन्हें वेद भक्त बनाना हमारा कर्तव्य बतलाया था, वह हमने कहाँ किया ? ऋषि यह भी मानते थे कि वेद के सत्य स्वरूप के प्रकाशित होते ही विश्व के मत-पंथ समाप्त होकर सम्पूर्ण भूमण्डल में एक मात्र वैदिक धर्म का साम्राज्य होगा।

–: वेद का वेदत्व बचाना ही होगा ! :–

बन्धुओ ! आज हम वेद प्रचार के नाम पर क्या कर रहे है। ? मैं वैदिक विद्वानों

द्वारा लेखन, प्रवचन व पत्रवाचन द्वारा वैदिक शब्दों की भाँति-भाँति की मनोहारी व्याख्या करते देखता हूँ, कल्पनाओं को वेद में थोपते देखता हूँ, तो कहीं व्याकरण, निरूक्त के आधार पर सुन्दर व्याख्या करते भी देखता हूँ तो सोचता हूँ कि वेद का वेदत्व तो कहीं दिखाई नहीं दे रहा। मिथ्या दम्भयुक्त दावे करने से वेद का वेदत्व बचेगा नहीं। वेद का सत्यार्थ जानना, उसका विज्ञान प्रकाशित कर उससे संसार के कल्याणार्थ निरापद तकनीक का निर्माण करने तथा वेद को ईश्वरीय सिद्ध करना ही वेद के वेदत्व को बचाने का एक मात्र उपाय है। आज कौन विद्वान् ऐसा करने का दावा कर सकता है ? मैं कभी-कभी अपने बन्धुओं को वेद में से आइंस्टीन, न्यूटन, हॉकिन्स आदि के सिद्धान्तों को ठीक उसी रूप में खोजने का यत्न करते देखता हूँ तो प्रतीत होता है कि वे आधुनिक विज्ञान को पहिले स्वतः प्रमाण मानते हैं फिर उसको आधार बनाकर वेद की अपने ढ़ंग से मनगढ़न्त व्याख्या करते हैं, तो कोई महानुभाव वेद में अनेक यंत्रों के नामों का उल्लेख मात्र पाकर उन मन्त्रों को संकलित करके अपने कार्य को महती शोध कहकर प्रचारित करते हैं। वे नहीं सोचते कि आधुनिक विज्ञान परिवर्तन का विकल्प रखता है परन्तु वेद मन्त्र परिवर्तनीय नहीं है तथा संकलन का नाम शोध नहीं है। हमें वेद के विज्ञान को आर्ष व वैदिक दृष्टि से ही परन्तु आधुनिक विज्ञान के गम्भीर अध्ययन के साथ देखकर ही सावधानीपूर्वक समन्वय का सम्भव प्रयास करना होगा। सर्वत्र समन्वय हो ऐसा आवश्यक नहीं है।

मान्य बन्धुओ ! यह कार्य अत्यन्त आवश्यक है। मेरा मानना है कि आर्य समाज के दस नियम सम्पूर्ण मानव धर्म रूपी विशाल वृक्ष हैं, जिसके मूल हैं, आर्य समाज का तृतीय नियम (वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।) तथा प्रथम नियम अर्थात् जगत् तथा वेद दोनों का रचयिता ईश्वर है। फल इसका छठा नियम (संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।) तथा अन्य सभी नियम इसके पुष्प, पत्र तथा शाखायें हैं। दुर्भाग्य से हम लोग मूल को बचाये बिना सबको सुधार कर उपकार के फल खिलाना चाहते हैं। एतदर्थ कॉलेज, चिकित्सालय, योगा नामक व्यायाम शिक्षणालय, वृद्धाश्रम, अनाथालय, कढ़ाई-बुनाई केन्द्र आदि खोलकर सोच रहे हैं कि हम संसार को स्वर्ग बना देंगे। हम ईसाई, मुसलमान, कामरेडों की भरपेट निन्दा मात्र को देशभक्ति समझते हैं। हिन्दू रूपी समुदाय के मूर्तिपूजा,अवतारवाद आदि के

खण्डन मात्र में धर्म-संशोधन समझने का भ्रम पालते हैं । श्वसन क्रियाओं तथा आसन व्यायामों को पांतजल योग समझते हैं, वेद पर मनोहारी, उत्तेजक भाषणबाजी मात्र को वेद प्रचार समझते हैं । इस सबका प्रतिफल ही यह है कि वेद का वेदत्व मिट गया है । वेद को साम्प्रदायिक ग्रन्थ मात्र समझा जा रहा है । हमने अपनी पीढ़ी को मूर्तिपूजादि दोषों से हटाकर नास्तिक तो बनाया है परन्तु सच्ची भक्ति का पाठ कहाँ पढ़ा सके ? हम सच्ची देश भक्ति व मानवता का पाठ भी कहाँ पढ़ा सके । हम हृदय से कहाँ विश्वास. स्वयं भी कर सके कि वेद परमात्मा की वाणी है । जहाँ वेद सम्मेलन हों, वहाँ महान् वेदोद्धारक दयानन्द की चर्चा भी न हो, यह क्या दयानन्द व आर्य समाज की मृत्यु नहीं है ? मैंने जो देखा है, देख रहा हूँ उससे हृदय काँप उठता है । आचार भ्रष्टता की चर्चा मैं यहाँ नहीं करना चाहता । मैं केवल सिद्धान्त की चर्चा कर रहा हूँ । मैंने एक उच्च योग्यताधारी आर्य विद्वान् को सन् ८८ में वेद तथा आर्ष ग्रन्थों में मूर्खता सिद्ध करते देखा था तब इस क्षेत्र में मैं नवागनतुक दंग रह गया था । तब मैंने दीक्षागुरू पूज्य स्व. आचार्य प्रेमभिक्षुजी महाराज (वेद मन्दिर, मथुरा) को कहा कि यह व्यक्ति आर्य समाज का विद्वान् होते हुये भी आर्य समाज के मूल को चुनौती दे रहा है । उसी समय संकल्प जागा वि कुछ भी हो आर्य समाज के प्रथम व तृतीय नियम को बचाना चाहिये परन्तु अस्वस्थता अपेक्षित मार्गदर्शक, साधन व परिस्थितियों के अभाव में संकल्प का बीज मन में ही द गया तथा समीक्षात्मक लेखन व अन्य सामाजिक कार्यों में समय व्यतीत करता रहा । मैं कुछ वेद वक्ताओं, वेद गोष्ठी में पत्रवाचन करने वालों से एकान्त में पूछकर देखा तो कि ने कहा कि वेद ईश्वरीय है तथा सर्वज्ञानमय है, ऐसा हृदय व मस्तिष्क से विश्वास न होता । हाँ, दयानन्द ने कहा तो मान लेते हैं । यह एक नमूना है । क्या आर्य जगत् इ बात को भूल गया कि कुछ काल पूर्व नागपुर से प्रकाशित आर्य प्रतिनिधि सभा का मु पत्र 'आर्यसेवक' कई मास तक वेद पर प्रहार करता रहा । लेखक व सम्पादक दोनों ह तो आर्य कहलाने वाले थे । दोनों कह रहे थे, "हमने वेद पर आक्रमण नहीं किया है बल्कि हमारी वेद में शंकायें हैं जिन्हें अनेकं विद्वानों के पास भेजा है, सन्तोषजनक समाधान नहीं मिला है । कोई समाधान कर सकता है तो करे ।" आज भी उनका यह पाप अबाधरूपेण जारी है । अब भी क्या कोई मानने का भ्रम करेगा कि सभी आर्यों की वेद पर पूर्ण श्रद्धा है । जिनकी है उनकी स्थिति पौराणिकों की अन्धश्रद्धा से मिलती जुलती है । मुझे ऐसा

ध्यान नहीं है कि कोई ऋषिभक्त विद्वान् विश्व के तो क्या कहूँ भारत के किसी भी प्रसिद्ध संस्थान में गर्जते हुये घोषणा कर सके के वेद ईश्वरीय ज्ञान है तथा सर्वज्ञानमय है । मान्यवर ! मैं बड़ी विनम्रतापूर्वक निवेदन करूंगा कि एक मैंने विश्वस्तरीय वेद विज्ञान सम्मेलन में अगस्त २००४ में चुनौतीपूर्ण शैली में अपनी बात "सृष्टि का मूल उपादान कारण" विषय पर रखने के पंश्चात् विश्वस्तरीय वैज्ञानिक संस्थान भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, ट्राम्बे, मुम्बई के वैज्ञानिकों से इसी विषय पर उनसे संवाद करके देखा है । जो आनन्द तथा प्रोत्साहन उन्होंने मुझे दिया, वह अपने में अद्भुत प्रतीत हुआ । उस संवाद के पश्चात् न्यूक्लियर पॉवर कॉर्पोरेशन ऑफ इण्डिया लिमिटेड, मुम्बई के अतिरिक्त मुख्य अभियन्ता श्री विजयकुमारजी भल्ला जो पूज्य स्वामी अमर स्वामीजी महाराज पूज्य महात्मा आनन्द स्वातीजी महाराज के समय से आर्य समाजी हैं तथा अनेक दार्शनिक व वैज्ञानिक ग्रन्थों का स्वाध्याय किये हैं और वर्तमान में विज्ञान भारती मुम्बई कार्यकारिणी के सदस्य हैं, ने मुझसे कहा, "मैं आर्य समाज तथा विज्ञान भारती द्वारा आयोजित वेद विज्ञान गोष्ठियों में वर्षों से भाग लेता रहा हूँ परन्तु ऐसा प्रथम बार हुआ है कि भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के थ्यौरिटील एसट्रो फिजिक्स सैक्शन के हैड डॉ. आभासकुमारजी मित्रा जैसे विश्व स्तरीय वैज्ञानिक ने आपके विचारों की प्रामाणिकता को स्वीकार किया है। आपने केन्द्र के कई वैज्ञानिकों के समक्ष बिग बैंग थ्यौरी, क्वार्कमॉडल आदि का प्रभावी खण्डन किया है । मेरी इच्छा है कि आप अपने अब तक किये जा रहे लेखन, प्रवचन आदि को पूर्णतया बन्द करके केवल वेद विज्ञान पर गहन अनुसंधान करके विश्व में वेदों को प्रतिष्ठित करें । अपने घर, समाज में लम्बे-लम्बे व्याख्यान देना, दावे करना सरल है परन्तु यहां ऐसे वैज्ञानिकों को प्रभावित करना ही आपके लेख की प्रामाणिकता है । ......आप मुम्बई में रहकर अपना शोध कार्य करें तो हम आपकी सम्पूर्ण व्यवस्था कर सकते हैं । ....आप अपने पत्र की व्याख्या में एक पुस्तक लिखें और इसका इण्टरनेट के माध्यम से विश्व में प्रचार करना चाहिये ।"

मैं, भल्लाजी, डॉ. मित्रा साहब तथा डॉ. जगदीशचन्द्रजी व्यास की आत्मीयता से अभिभूत था, परन्तु स्वास्थ्य के कारण के साथ ही मैं इसके पूर्व ही वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास का गठन कर चुका था परन्तु कार्य कुछ भी प्रारम्भ नहीं हुआ था, इस कारण इसी कार्य को न्यास के माध्यम से करने का वचन दिया । पाली-मारवाड़ में किराये का भवन लिया क्योंकि कोई भवन रहने को मेरे पास नहीं था । दमा रोग की पीड़ा से केवल मारवाड़

में ही शान्ति रहती है, इस कारण अन्यत्र स्थायी रहने पर विचार भी नहीं किया ओर सत्य यह भी है कि किसी आर्य संस्था ने मुझे ऐसा कोई प्रस्ताव भी नहीं भेजा । हाँ, एक पौराणिक महन्त महाराज ने नेशनल हाइवे पर एक सौ बीघे भूमि के साथ समस्त साधन उपलब्ध कराने का अति उदारपूर्वक प्रस्ताव किया था परन्तु मैं वेद के उद्धारक महर्षि दयानन्द सरस्वती के ध्वज के नीचे एवं उन्हीं के आश्रय से ही काम करना चाहता था व हूँ, इस कारण उन महाराज जी को कृतज्ञता पूर्वक नमन करते हुये भी उनका प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया । पाली में रहकर "सृष्टि का मूल उपादान कारण" नामक पुस्तक हिन्दी में लिखी जिस पर प्रकाशन से पूर्व मुम्बई के कुछ वैज्ञानिकों जैसे-डॉ. आभासकुमारजी मित्रा, डॉ. जे .सी. व्यास, श्री भल्लाजी आदि से सप्ताह भर संवाद हुआ । फिर डॉ. मित्राजी ने मेरे विचारों पर आश्चर्य व श्रद्धा व्यक्त करते हुये विश्व के वैज्ञानिकों को इसे पढ़कर लाभ उठाने की बात करने के साथ-साथ वेदों से कुछ प्रेरणा लेने का परामर्श दिया। यह मेरे तथा सम्पूर्ण आर्य वा वैदिक जगत् के लिये गौरव की बात है । मैंने सोचा कि एक विश्व स्तरीय वैज्ञानिक जो मुझसे नितान्त अपरिचित हैं केवल अभी-अभी परिचय हुआ है, ही इतने प्रभावित हो गये तब मेरे लेखों के हजारों प्रशंसक पाठक तथा लेख लिखने का आग्रह करने वाले विद्वान्, पत्रिकाओं के सम्पादक, प्रकाशक, साथी विद्वान्, संन्यासी, ब्रह्मचारी, आर्य भामाशाह व कार्यकर्ता तो मुझे इस महान् लक्ष्य के लिये सहयोग हेतु तत्काल आगे आकर मुझे आर्थिक समस्याओं से पूर्ण मुक्त कर देंगे और मैं विश्व स्तर पर वैदिक ज्ञान विज्ञान को प्रतिष्ठित करने में सफल हो सकूँगा ।

हमारे न्यास संरक्षक श्रद्धेय आचार्य स्वदेशजी तो सर्वात्मना मेरे कार्यों का प्रसार-प्रचार उस स्थिति में कर रहे हैं, लोगों से सहयोग की अपील सर्वत्र करते हैं, जबकि उनका वेद मन्दिर स्वयं संकटग्रस्त है, यह अति महानता का परिचायक है जिससे मैं बहुत अभिभूत हूँ ।

मैंने अपने लक्ष्य की प्राप्ति की योजना पर गम्भीरता से विचारा है । मेरा विचार यह है कि इस लक्ष्य प्राप्ति के लिये मुझे अत्यन्त पुरूषार्थ करना होगा । मुझे विश्वस्तरीय आधुनिक विज्ञान (फिजिक्स विशेषतया) तथा वैदिक वाङ्मय का स्वयमेव अध्ययन करना होगा । अंग्रेजी भाषा तथा गणित का भी कुछ अध्ययन करना होगा । मैं वेद तथा आर्ष ग्रन्थों के अनार्ष भाष्यों से सन्तुष्ट नहीं हो पाऊंगा, इस कारण स्वतः ही नयी दिशा बनानी होगी । श्रद्धेय आचार्य स्वदेशजी ने मुझे कहा था "आपको भाष्यों, टीकाओं से कुछ सहारा तो मिल सकता है परन्तु आपको स्वयं ही वैज्ञानिक सूक्ष्म चिन्तन व मनन आदि से अपना

मार्ग बनाना होगा क्योंकि सभी के आर्ष भाष्य उपलब्ध नहीं है । वैसे अधिकांशः मैं वाद-सम्वाद में ही उलझे विद्व मण्डल पर विचारता हूँ तो दुःख होता है । पूज्यपाद आचार्य विशुद्धानन्दजी मिश्र महाराज (बदायूँ) एवं कुछ अन्य विद्वानों से ऐतरेय ब्राह्मण पर चर्चा हुई तो उनका भी भाव कुछ इसी प्रकार था । आज विद्वानों से वेद की प्रामाणिकता पर मैं पूछता हूँ तो वे तत्काल वेद की अन्तः साक्षी तथा आर्ष ग्रन्थों के प्रमाण देने लगते हैं । मैं ऐसे विद्वानों से विनम्रतापूर्वक निवेदन करता हूँ कि ये प्रमाण देते-देते हमें वर्षों व्यतीत हो गये । ये प्रमाण उस काल में सार्थक थे जब इन प्रमाणों की प्रमाणिकता सर्वमान्य थी परन्तु आज इनकी प्रथम आवश्यकता नहीं है । अब पहिले तो इन स्वतः प्रमाणों को प्रमाणित करने की अनिवार्यता है । उसके पश्चात् ऋषियों के ग्रन्थों को प्रामाणिक सिद्ध करने की अनिवार्यता होगी । आज इन्हें स्वतः वा परतः प्रमाण हृदय से कौन मानता है, क्या आपने कभी सोचा? मेरे विद्वज्जनो ! आज गहराई से विचारो । अन्दर झाँक कर देखो। अपने युवा पुत्र–पुत्रियों के अन्तःकरण को झांक कर देखो, तो आप पायेंगे कि आपकी सन्तान स्वयं पाश्चात्य चाकाचौंध में पगलायी इन्हें प्रमाण नहीं मानती है । वे विज्ञान व 21वीं सदी के भूतरोग से ग्रस्त होकर वेदादि शास्त्रों के मन व आत्मा से पक्के विरोधी बन चुके हैं । हाँ, उनका विरोध का स्वर अभी बाहर प्रकट विशेषतः नहीं हुआ है । वे अन्दर से अमरीकी, जर्मन, फ्रेंच, अंग्रेज वा जापानी भक्त तथा सिनेसितारे वा खिलाड़ियों के उपासक बन गये हैं । वे बाहर से भले ही यज्ञ व संध्या की औपचारिकता में (यदि आप करते हैं तो) सहयोगी बन जाते हैं परन्तु उनके अन्दर पाश्चात्य उपभोक्तावादी कुसभ्यता का भयंकर राक्षस बैठा है । यह राक्षस रावण, दुर्योधन, दुःशासन वा शूर्पणखा से भी अधिक पापी व भयंकर है। आप ईसाई, मुसलमानों, कामरेडों को ही वेद वा धर्म का विध्वंसक मानने का भ्रम पाले हैं । याद रखो आपका यह भ्रम आगामी वर्षों में आपकी अकर्मण्यता व अनार्यता के कारण टूटने वाला है, यदि आपने अभी से वेद की प्रामाणिकता को बचाने का गम्भीर प्रयत्न नहीं किया तो वह दुर्दिन दूर नहीं, जब आपकी दम्भी सन्मान आप पर व्यंग्य करेगी तथा आप स्वयं को वेद–शास्त्रों से विमुख कर देगी । मेरे विद्वान् वा आर्य नेता बतायें कि आपकी सन्तान क्या वास्तव में आर्य रह गयी है ? क्या कभी आपने इसका कारण जानने का प्रयास किया ? मेरे विद्वान् मित्रो ! मैं आपको पूछता हूँ यदि आपको किसी मुसलमान, ईसाई, नास्तिक या वैज्ञानिक से वेद की अपौरूषेयता वा प्रमाणिकता पर शास्त्रार्थ करना पड़े तो

क्या आप उसे वेद वा आर्ष ग्रन्थों के प्रमाण देंगे यदि हाँ, तो क्या उसके साथ न्याय होगा और क्या इसे मानेगा ? मैं समझता हूँ कि आप अपनी युक्तियों से ही अपना पक्ष सिद्ध करने का प्रयास करेंगे जैसे :-

१. सृष्टि के आदि में ईश्वर द्वारा ज्ञान देना अनिवार्यता है, एतदर्थ आप विकासवाद का खण्डन करेंगे ।

२. ईश्वरीय ज्ञान सृष्टि के आदि में ही होना चाहिए ऐसा सिद्ध करते समय आप कुरान आदि की अर्वाचीनता सिद्ध करते हुए उसको पौरूषेय सिद्ध करेंगे । इसके साथ वेद की सनातनता सिद्ध करने का प्रयास करेंगे ।

३. ईश्वरीय ज्ञान उस भाषा में होगा जो सबकी मूल हो, यह सिद्ध करने का प्रयास करते हुए वेद भाषा को मूल सिद्ध करने का प्रयास करेंगे ।

४. ईश्वरीय ज्ञान में किसी देश या मनुष्य का इतिहास नहीं होगा, ऐसा सिद्ध करने का प्रयास करते हुए कुरानादि का खण्डन तथा वेद का मण्डन करने का प्रयास करेंगे ।

५. ईश्वरीय ज्ञान में विज्ञान, बुद्धि एवं सृष्टि क्रम विरूद्ध कुछ नहीं होगा ऐसा सिद्ध करते हुए बाईबिल आदि का खण्डन करते हुए वेद की ईश्वरीयता सिद्ध करने के लिए आधुनिक विज्ञान द्वारा किये आविष्कारों, सिद्धान्तों वा परिकल्पनाओं को वेद में दिखाने का प्रयास करेंगे ।

६. 'वेद' शब्द के अनेक निर्वचन या व्युत्पत्तियों के द्वारा अर्थ करके वेद का प्रमाण्य सिद्ध करने का प्रयास करेंगे ।

प्रिय बन्धुवर ! मैं आपको पूछना चाहता हूँ ।

१. सृष्टि-आदि में ईश्वरीय ज्ञान की अनिवार्यता अनेक तर्कों द्वारा सिद्ध होने के उपरान्त भी वह ज्ञान वेद की चार संहिताओं में ही लिपिबद्ध है, यह सिद्ध कैसे हो सकेगा ?

२. ईश्वरीय ज्ञान की प्राचीनता के लिए अनेक प्रमाण देकर भी यह कैसे सिद्ध करेंगे कि ये चार संहिताओं में दिये मन्त्र समूह की उत्पत्ति ही सृष्टि के आदि में हुई थी । यदि कुरान, बाइबिल आदि सबकी अपेक्षा वेद प्राचीन सिद्ध हो जायेगा तब भी इसकी आयु 1960853109 वर्ष सिद्ध करना संहज बात नहीं होगी ।

३. वेद की भाषा सब भाषाओं की मूल होने पर भी इन मन्त्र समूहों में ऐसा कौनसा

वैशिष्ट्य सिद्ध करेंगे जिसका रचयिता स्वयं सृष्टिकर्ता ही हो सकता है । हजारों ऋषि मिलकर भी इसकी रचना नहीं कर सके ।

४. कुरान, बाईबिल में इतिहास की कहानियाँ बतलाकर उनको अपौरूषेयत्व का खण्डन करने मात्र से वेद का अपौरूषेयत्व कैसे सिद्ध होगा ? वेद के सूक्तों, अध्यायों, मण्डलों तथा मन्त्रों की परस्पर संगति, पूर्ण वैज्ञानिकता आदि को सिद्ध करने के लिए विशेष क्या प्रयास किया जायेगा ?

५. कुरान, पुराण, बाईबिल आदि की सृष्टि व विज्ञान विरूद्ध कल्पनाओं का उपहास करने से वेद की वैज्ञानिकता कैसे सिद्ध होगी ? वेद में कुछ यन्त्रादि के नाम और संकेत मिलने से वेद अपौरूषेय सिद्ध कैसे होगा ? क्या सभी मन्त्रों की वैज्ञानिकता की परख हमने कर ली है, जो उसको सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान का मूल, घोषणा पूर्वक बतलाते हैं ।

६. वेद की व्युत्पत्ति और निर्वचन पर सुन्दर व्याख्यान देकर भी वह वेद इन चार संहिताओं का ही नाम है ऐसा सिद्ध कैसे होगा ?

मेरे बन्धुओ ! कुछ विज्ञान बुद्धि वाले आधुनिक व्यक्ति प्रायः प्रश्न करते हैं कि वैदिक लोग एक सुई तक न बना सके और प्रतिज्ञा यह करते हैं कि आधुनिक विज्ञान अभी बहुत अधूरा है और हमारा वेद सम्पूर्ण विज्ञान है । अन्य भी प्रश्न करते हैं । इन प्रश्नों का सामना मुझे वैज्ञानिक मण्डली में रक्षा प्रयोगशाला, जोधपुर में जुलाई २००५ में करना पड़ा । एक वैज्ञानिक ने मुझसे कहा, 'संस्कृतज्ञ और वैदिक लोग नकल करने में बहुत चतुर होते हैं । जो भी आधुनिक विज्ञान बड़ा आविष्कार करता है । उसे ही वेद में ढूँढ़कर दिखाकर कहते हैं कि हमारे वेद तथा ऋषि ग्रन्थों में यह पहले से ही विद्यमान है । आज तक आप लोगों ने कोई नया आविष्कार करके नहीं बताया है ।" इसका उत्तर मैंने यह कहकर दिया, "श्रीमान् ! मैंने अपनी पुस्तक में आपके विज्ञान की कहीं नकल नहीं की बल्कि आपके प्रसिद्ध सिद्धान्तों की भूलें दर्शाकर उनका समाधान अपने मस्तिष्क तथा वैदिक विज्ञान से दिया है । जो संसार में अन्यत्र नहीं मिलेगा ।" मेरे उत्तर से वे भौंचक्के रह गये । वहीं पर पद्मभूषण से सम्मानित अन्तर्राष्ट्रिय वैज्ञानिक प्रो. अजीतरामजी वर्मा को भी मैंने वेदज्ञों, साधु-सन्तों पर व्यंग्य करते देखा । "आप लोग व्यर्थ के केवल प्रश्न ही करते हैं जैसे बिग बैंग से पूर्व क्या था, उससे पूर्व क्या था.......।

इन प्रश्नों का कोई अर्थ नहीं है । प्रश्न करने में कुछ .खर्च नहीं होता है ।" उस वैज्ञानिक मण्डली के मध्य मैंने तत्काल यह उत्तर दिया "मान्य प्रो. साहब ! मैं आपसे प्रश्न करने नहीं आया हूँ कि बिग बैंग से पूर्व क्या था बल्कि उत्तर देने आया हूँ कि बिग बैंग सिद्धान्त क्यों गलत है ? मैं यह बताने आया हूँ कि न केवल बिग बैंग से पूर्व क्या था बल्कि सबसे पूर्व क्या था ?" तब उन्होंने आश्चर्य चकित होकर मुझ साधुवेशधारी से कहा कि मैं आपकी पुस्तक अवश्य पढूँगा । मैं अब तक चार बार भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र ट्राम्बे, मुम्बई में जाकर सप्ताह–सप्ताह ठहर कर वर्तमान भौतिक विज्ञान की अनसुलझी गुत्थियों पर वार्ता कर चुका हूँ, परन्तु कई क्षेत्रों में वर्तमान विज्ञान को असहाय ही पाया है । बन्धुओ ! यह बात भी

ध्यातव्य है कि मैं वैज्ञानिकों व आधुनिक विज्ञान का विरोधी नहीं हूँ बल्कि मैं उन्हें सत्येच्छु तथा अपना सदैव मित्र मानता हूँ । उनकी साधना को नमन भी करता हूँ परन्तु मैं अपनी बुद्धि को ताला लगाकर अंधानुकरण भी नहीं करता हूँ । इस विषय में मेरी पुस्तिका "वेद विज्ञान अनुसंधान की ओर बढ़ते कदम" विशेषतया पठनीय है ।

मान्यवर बन्धुओ ! बड़े वैज्ञानिकों तथा वैज्ञानिक संस्थानों के बीच जब मैं आप लोगों को नहीं देखता व सुनता हूँ, तब बहुत दुःख होता है । हम अपने घर में ही बैठकर विश्व को चुनौती देते हैं अथवा परस्पर एक दूसरे की प्रशंसा करते तृप्त होते हैं । इससे कुछ होने वाला नहीं । मुझे बड़े–बड़े वैज्ञानिक तो महत्व दे रहे हैं परन्तु उच्च पदासीन आर्य नेताओं और कई संस्थाओं के संचालक आर्य विद्वानों की दृष्टि में मैं नितान्त अयोग्य और अज्ञानी हूँ । मेरे पास न तो कोई शिक्षा उपाधि है न कोई पद, मठ, धन और ऐश्वर्य है, फिर क्यों महत्व मिलेगा ? आज सर्वत्र इसी की तो प्रतिष्ठा है । इसी चकाचौंध में सम्पूर्ण आर्य जगत् वा हिन्दू कहाने वाला समाज आज भ्रमित दिखाई दे रहा है । उदयपुर के एक सिद्धान्तनिष्ठ स्वाध्यायशील आर्य समाजी ने कहा स्वामी रामदेवजी आधुनिक पंतजलि है उन्हीं के साथ लग जाओ । किसी ने कहा यन्त्र बनाओ, किसी ने कहा कि यज्ञ विज्ञान पर शोध करो । मैं इस प्रकार के विचार वाले सभी महानुभावों से अनुरोध करूंगा, कि स्वामी रामदेवजी ने चिकित्सा क्षेत्र में निश्चित ही एक क्रान्ति खड़ी की है, यह सत्य है । इससे लाखों लोगों को लाभ भी हुआ है व हो रहा है । मैं स्वयं भी कुछ लाभान्वित हुआ हूँ । हाँ, महाप्रमादी, आलसी, पेटू व विलासी लोगों को इससे अधिक लाभ इसलिये होता है क्योंकि वे हाथ–पैर हिलाना तो प्रारम्भ कर देते हैं और प्रतिदिन कुछ श्रम करना सीख गये हैं । परन्तु यही कार्य पूर्ण तथा अन्तिम नहीं है । हाँ, स्वामी रामदेवजी से कुछ श्वसन क्रियाओं का व्यायाम सीख कर योग दर्शन से नितान्त अनभिज्ञ सहज योगिराज बनकर धन व यश लूटकर योग को अधोगति की ओर अवश्य ले जा रहे हैं, जिसका

अनिष्टकारी परिणाम अभी हम नहीं देख पा रहे हैं । स्मरणीय है कि सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है वेद की समस्त सत्यविद्याओं का प्रकाश, जिससे विश्व का सर्वांगीण विकास संभव हो सके तथा सभी मनुष्य ईश्वर की सत्ता व महत्ता का अनुभव करते हुए सदाचार में प्रवृत्त हो सकें आज कितने उपदेशक, धर्माचार्य सत्य को सत्य, असत्य को असत्य तथा पापी को पापी कहने का साहस कर सकते है ? कितने ऐसे हैं जो वेदादि शास्त्रों की मर्यादा का पालन करते हुए उन्हीं का उपदेश करते हैं ? जो ऐसे हैं वे निश्चित ही बड़े पुण्यात्मा है, चाहे वे कितने ही दुःखी या निर्धन क्यों न हों ? बन्धुओ क्षमा करो, सत्य-धर्म तथा विज्ञान, ये भीड़ धन या यश से प्रमाणित नहीं होते । दुनिया के सारे लोग मिलकर भी सूर्य को अन्धकार करने वाला सिद्ध नहीं कर सकते । वह जैसा है वैसा ही रहेगा । हम एल्युमिनियम के दोषों को दर्शाते हुए पीतल के गुणों को बतलाकर एल्युमिनियम का बहिष्कार करें तथा पीतल के पात्रों का उपयोग कराकर लोगों का भला करें यह धर्म का कार्य है परन्तु पीतल को सोना बतलाकर ऐसा करना सोने से सदैव दूर रखने जैसा ही घोर कुकर्म होगा ।

मेरे प्यारे भाइयो ! मैं सस्ते, लोकप्रिय साधनों स जुटी भीड़, प्रतिष्ठा व धन से किंचिद् भी प्रभावित नहीं होता । इन मीठे प्रतीत होने वाले प्रचार से शिष्य मण्डली बनाकर यश, धन तो प्रभूत मात्रा में अर्जित किया जा सकता है परन्तु इससे ऋषिभक्त, वेदानुरागी तथा सच्चे ईश्वर भक्त नहीं बनाये जा सकते । मैं नहीं चाहता कि लोग मेरे भक्त बनें, मेरी पूजा वा प्रशंसा करें बल्कि मेरी इच्छा है कि संसार के मानव केवल और केवल वेद (सत्य धर्म व विज्ञान का स्त्रोत) के ही भक्त, एकमात्र ईश्वर के उपासक तथा तपोनिष्ठ विश्वहितैशी ऋषि–मुनियों, शंकर, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि देवों तथा भगवान् मनु, श्रीराम, श्रीकृष्ण जैसे महामानवों के ही अनुयायी बनें, इसी से मेरी सम्पूर्ण मनोकामनायें पूर्ण हो जायेंगी और इससे ही संसार की शारीरिक, आत्मिक, सामाजिक व आर्थिक उन्नति होगी और वह भी स्थायी रूप से होगी । मैं तो यह मानता हूँ कि यदि लाखों आर्यों के बलिदान से भी ऋषि दयानन्द के स्वप्नों का वैदिक स्वर्ग विश्व (रामराज्य), चक्रवर्ती व जगद्गुरू भारत बन सके तो भी सस्ता है, फिर मेरे अकेले के बलिदान का तो मूल्य ही क्या है ? यह तो हुयी योग की चर्चा, अब अन्य सुझावों पर अपने विचार रखता हूँ ।

कोई यन्त्र बनाना यद्यपि वेद-विज्ञान का ही उत्तम प्रदर्शन होगा परन्तु मैं सोचता हूँ कि इससे भी वेद का अपौरूषेयत्व सिद्ध नहीं हो पायेगा । संसार इतना तो मान लेगा

कि वैदिक ऋषि भी वैज्ञानिक थे परन्तु यह सिद्ध करने मात्र से वेद का स्वतः प्रमाणत्व सिद्ध नहीं हो पायेगा। हम भी आधुनिक वैज्ञानिक ग्रन्थों को स्वतः प्रमाण नहीं मान सकते। मेरा प्रथम लक्ष्य वेद के अपौरूषेयत्व को विश्व को बता देना है उसके पश्चात् मैं न सही तो अन्य विद्वान् वर्तमान टेक्नोलॉजिस्टों के साथ मिलकर इस दिशा में कदम बढ़ा सकते हैं।

यज्ञ विज्ञान द्वारा वृष्टि करना व रोकना, मानव, पशु व वनस्पतियों की चिकित्सा करके जनकल्याण के क्षेत्र में क्रान्ति मचाई जा सकती है। अकाल, बाढ़, तूफान, रोग आदि को दूर करने में सम्भवतः बहुत सफलता मिल सकती है परन्तु इस हेतु मुझे वैदिक वाङ्मय के साथ रसायन विज्ञान, मौसम विज्ञान, पर्यावरण विज्ञान, कृषि-आयुर्वेद आदि का भी गहन अध्ययन करना होता। मेरी इस दिशा में कार्य करने की इच्छा भी बहुत थी परन्तु निम्न कारणों से मैं इस ओर प्रवृत्त नहीं हो सका।

१. रसायन विज्ञान में मेरी रूचि प्रारम्भ से ही कम रही।

२. आज उपभोक्तावादी, विलासी राक्षसी कुसभ्यता ने पर्यावरण (जल, वायु, भूमि आदि) को नष्ट-भ्रष्ट कर डाला है। कोई भी आज अपनी विलासिता को छोड़ना नहीं चाहता। ऐसी दशा में यज्ञ के द्वारा पर्यावरण को पूर्ण स्वस्थ बनाकर उपर्युक्त आपदाओं को दूर करना असम्भव सा प्रतीत होता है। इस हेतु जनता, सरकार, उद्योग जगत्, कृषक सभी को तपोनिष्ठ बनने का संकल्प लेना होगा, परन्तु ऐसा होना नितान्त असम्भव लगता है।

३. इस कार्य में करोड़ों का व्यय प्रयोगों में ही हो जायेगा फिर व्यापक स्तर पर कार्य हेतु तो खर्च की सीमा नहीं है। तथाकथित सैक्यूलर शासन से सहयोग की आशा ही नहीं है। फिर उपरिवर्णित कारणों से परीक्षण असफल हुये तो अपयश फैलाने वालों तथा वेद विरोधियों की बन आयेगी।

४. इसकी सफलता से भी वेद का वेदत्व पूर्णतः बच नहीं पायेगा। ऋषियों की वैज्ञानिकता तो सिद्ध हो सकेगी परन्तु वेद के स्वतः प्रामाण्य पर प्रश्नचिन्ह फिर भी रहेंगे।

५. यज्ञ पर शोध हेतु सर्वप्रथम गौ की रक्षा करनी होगी। इसके अर्थशास्त्र को सिद्ध करके गौ-संवर्धन करना होगा तभी गोघृत की उपलब्धता हो सकेगी। डेयरी अथवा भैंस के दूध से यज्ञ-शोध सफल कभी नहीं हो पायेगा। आज इस अभागे

देश में गाय को बचाना और उसका संवर्धन करना कोई सरल कार्य नहीं है। इन पाँच कारणों से मैं इस दिशा में प्रवृत्त नहीं हुआ । मैं सोचता हूँ कि आज जब वेद पर ही भारी संकट है तब अन्य का क्या कहा जाये ? मेरा मानना है कि यदि वेद को संसार ने अपौरूषेय व स्वतः प्रमाण मान लिया तो फिर वेद की सभी विद्यायें जैसे गौ विज्ञान, यज्ञ विज्ञान, योग, अर्थशास्त्र, सामाजिक व राजनैतिक व्यवस्थायें आदि को बचाया जा सकेगा ओर यदि वेद नहीं बचा तो कुछ भी नहीं बच पायेगा । अब प्रश्न यह है कि वेद का अपौरूषेयत्व कैसे सिद्ध होवे ? किसी भी आर्ष वा वैदिक प्रमाण से वेद को ऐसा सिद्ध करना सम्भव नहीं तथा किसी विज्ञान विशेष को भी वेद में सिद्ध करने से भी वेद की ईश्वरीयता (अपौरूषेयता) सिद्ध नहीं हो पायेगी, ऐसी स्थिति में क्या किया जाये? मैंने इस पर बहुत विचार किया कि क्या समपूर्ण वैदिक आर्ष वाङ्मय में कोई ऐसा प्रमाण नहीं है जिसे विश्व का कोई भी व्यक्ति विचार करने व मानने योग्य स्वीकार करे । मुझे ब्रह्मसूत्र का एक सूत्र 'तत्तुसमन्वयात्' (1/1/4) मिला । इस पर विचार किया तो बड़ा आनन्द हुआ । ब्रह्मसूत्र के रचयिता भगवत्पाद महर्षि व्यासजी महाराज के सम्मुख प्रश्न आया कि कैसे मानें कि वेद का रचयिता ब्रह्म ही है तो उन्होंने इस सूत्र को लिखकर कहा कि यह तो इस बात से सिद्ध होता है कि इस सम्पूर्ण सृष्टि–विज्ञान पर तथा वैदिक विज्ञान पर विचार करें तो दोनों में पूर्ण समन्वय दिखाई देता है अर्थात् इस सृष्टि की रचना तथा वेद में दिये एतद्विषयक ज्ञान में कोई भिन्नता नहीं है । इस बात से ऐसा सिद्ध होता है कि दोनों का रचयिता एक ब्रह्म ही है जिसने अपना ज्ञान वेद में बतलाया और उसके प्रयोग से ही सृष्टि रचना की । जिस प्रकार सृष्टि रचना किसी जीव द्वारा सम्भव नहीं है उसी प्रकार उसके पूर्ण व सत्य ज्ञान का उपदेश भी वही ब्रह्म दे सकता है ।

मेरे बन्धुओ ! ऋषिराज व्यास के सम्मुख दोनों विज्ञान स्पष्ट थे परन्तु आज हम केवल सूत्रार्थ रट–रटा कर इतिश्री समझ रहे हैं । हमें सृष्टि–विज्ञान का हजारवाँ, लाखवाँ भाग पता नहीं फिर वेद और सृष्टि के समन्वय का दावा अपने अध्यापन, व्याख्यान वा लेखन में कर देते हैं । मैं अनुभव करता हूँ कि आधुनिक विज्ञान भले ही परिवर्तन का विकल्प खुला रखता है और यह उसकी उदारता, मस्तिष्क के खुलेपन, असत्य त्याग व सत्य ग्रहण की तीव्र इच्छा तथा विनयशीलता का ही प्रतीक है और हम सब धर्माचार्य कहाने वाले तथा वैदिक विद्वानों के लिये अनुकरणीय भी है पुनरपि इस विज्ञान को स्वतः प्रमाण

मानकर वेद में खोजने का यत्न करना महती भूल होगी । परन्तु स्मरण रहे कि प्रयोगों द्वारा सतत् विकसित होते विज्ञान का उपहास वा उपेक्षा करना भी घोर नादानी होगी । यह विज्ञान हमारा विरोधी नहीं बल्कि हमारा अन्तरंग मित्र है । वैज्ञानिक हमारे परमहितैषी तथा आदरणीय है । हमें सृष्टि-रचना-विज्ञान का आधुनिक पक्ष जानने हेतु कॉस्मोलोजी, पार्टिकल-न्यूक्लियर-एटॉमिक फिजिक्स, भूविज्ञान आदि का गम्भीर अध्ययन करना होगा। प्राणी व वनस्पति रचना जानने हेतु प्राणी-विज्ञान, वनस्पति-विज्ञान व मौसम विज्ञान का भी अध्ययन अपेक्षित है । इसके साथ वैदिक विज्ञान इस विषय में क्या कहता है ? दोनों में क्या भेद है व क्या समानता है ? यह जानना होगा । हम आधुनिक विज्ञान की गहराइयों में जाकर उसमें हो रहीं त्रुटियों का ज्ञान वैज्ञानिकों को करायें । याद रहे, त्रुटियां निकालने से ही बात नहीं बनेगी । हमें उन त्रुटियों का समाधान वैदिक विज्ञान से बिन्दुशः देना होगा। हमें वेद को रहस्यमयता के जाल से मुक्त कर वैदिक अवधारणाओं, संज्ञाओं को आधुनिक विज्ञान की भाषा में स्पष्ट करने का प्रयास करना होगा । हमें कूपमण्डूकता की प्रवृत्ति को त्यागना होगा । हमें उस भाषा में संसार को अपना विज्ञान समझाना होगा, जिसे संसार समझता है । मैं अपनी पुस्तक पर तथा अन्य प्रसंगों में आज कई प्रकार की प्रतिक्रियाओं को सुनता हूँ -

१. सृष्टि पर कोई क्या खोज करेगा ? सत्यार्थ प्रकाश के आठवें समुल्लास में सब लिखा हुआ है.।
२. प्रकृति (उपादान कारण) पर क्या कोई लिखेगा ? सब जानते हैं कि सत्व, रजस् तथा तमस् की साम्यावस्था को प्रकृति कहते हैं ।
३. आधुनिक वैज्ञानिकों को ईश्वर व जीव का ज्ञान तो है ही नहीं तथा प्रकृति का भी अधूरा ज्ञान है । इस प्रकार उन्हें हमारी अपेक्षा १/६ भाग का ही ज्ञान है।
४. हमारी यज्ञ प्रक्रिया में समूचा-सृष्टि-विज्ञान भरा हुआ है ।

मान्यवर ! मैं (१) प्रथम प्रतिक्रिया पर निवेदन करूँगा कि क्या कोई महानुभाव सत्यार्थ प्रकाश वा ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के सृष्टि प्रकरणों को पूर्णतया समझने का दावा कर सकता है ? यदि हाँ, तो क्या वह इसके आधार पर किसी उच्च कोटि की प्रयोगशाला में बैठकर कुछ प्रयोग करने का साहस रखता है ? यदि नहीं तो व्यर्थ दावों से कुछ होने वाला नहीं है ।

(२) 'सत्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः !' इस सांख्य सूत्र के पढ़ने-पढ़ानं वा प्रवचन करने वाले महानुभाव विद्वान् क्या सत्व् रजस् तथा तमस् के विषय में विस्तार से अपनी अवधारणायें स्पष्ट करेंगे ? उनकी साम्यावस्था की व्याख्या आधुनिक विज्ञान की भाषा में करने की इच्छा करेंगे ?

(३) हम स्वयं को प्रकृति विषय में भी आधुनिक वैज्ञानिकों से दोगुना ज्ञानी होने का दावा करते हैं । हम शब्द के अर्थ पर अर्थ करते जाकर लम्बे-लम्बे वयख्यान देते रहते हैं परन्तु आज तक सत्व, रजस्, तमस् को उचित परिभाषा भी नहीं दे सके । वर्तमान वैज्ञानिकों ने एक-एक कण पर कई-कई ग्रन्थ लिखे हैं । क्या हम सत्वादि पर २-४ पृष्ठ भी युक्ति संगत लिखने की क्षमता रखते हैं ? सत्वादि का तो क्या कहें, पृथिव्यादि महाभूतों को भी नहीं समझ सके हैं और जिन्हें हम अज्ञानी वा अपूर्ण ज्ञानी कहकर उन पर व्यंग्य करते हैं, वे वैज्ञानिक इलेक्ट्रोनिक्स आदि क्षेत्रों में क्रान्ति मचा रहे हैं । आकाश की दूरियों को नाप रहे हैं । उनके प्रयोगों से हम ज्ञानी बनने वाले भी सगर्व लाभ उठा रहे हैं, फिर भी विज्ञान की आलोचना कर रहे हैं । बातों की इस जादूगरी से वेद की प्रामाणिकता सिद्ध होने वाली नहीं है । हाँ, हम उपेक्षा तथा उपहास के पात्र अवश्य हो गये हैं ।

हम 'गौ' शब्द की व्युत्पत्ति व निर्वचन बड़े पाण्डित्यपूर्ण ढ़ंग से करते हैं परन्तु आज तक 'गौ' नामक पशु को प्राप्त तक नहीं कर सके और यह भी स्पष्ट नहीं कर पाते कि गौ पशु की ठीक-ठीक पहिचान क्या है ? तब दूध तो कहाँ मिले ? उधर जो 'काउ' शब्द की व्याख्या नहीं करते फिर भी उस कॉउ को पकड़ कर दूध, मक्खन खा रहे हैं और हमें भी खिला-पिला रहे हैं । हम उनका दिया हुआ खाते-पीते हुये भी उन्हें अपूर्ण ज्ञान वाला बता रहे हैं । दम्भ की यह कैसी पराकाष्ठा है ?

(४) क्या कोई विद्वान् महानुभाव मुझे समझाने की कृपा करेंगे कि किस प्रकार यज्ञ-प्रक्रिया में सृष्टि विज्ञान भरा हुआ है ?

आज विश्व की सर्वोत्तम लेबोरेटरी 'सर्न' में हजारों, लाखों करोड़ डॉलर खर्च करके 80 देशों के लगभग 8000 वैज्ञानिक जिनमें 70 भारतीय हैं मूलकण की खाज में जुटे हैं ।उनका लक्ष्य 20 वर्ष का है ।आर्य महानुभावों ! मैं आपको निवेदन कर देना चाहता हूँ कि हमारा उद्देष्य भी यही बल्कि इससे भी आगे जाकर साम्यावस्था से लेकर सम्पूर्ण सृश्टि प्रक्रिया को सुस्पश्ट करने का है ।और हमारी समय अवधि अब लगभग

12½ वर्ष तक है। हमारे पास मस्तिष्क ही प्रयोगशाला है ओर वेदादि शास्त्र ही उपकरण है। धन में सहयोगी कुछ आर्यजन हैं परन्तु विद्या का सहयोगी मार्गदर्शक कोई नहीं है। हाँ, वर्तमान विज्ञान के डॉ. वसन्तजी मदनसुरे अवश्य कुछ सीमा तक साथी बन रहे हैं। अनेक उच्च कोटि के भौतिक वैज्ञानिक भी साथ हैं परन्तु आर्ष व वेद विद्या में कहीं कोई मार्गदर्शक नहीं है। वस्तुतः मैं ही अब तक लिखे साहित्य से सर्वथा असन्तुष्ट हूँ। सम्भवतः पूज्य पं. भगवतदत्तजी रिसर्च स्कॉलर के साहित्य से कुछ विशेष मार्गदर्शन मिल पायेगा। आर्ष ग्रन्थ तो मेरे आधार हैं परन्तु उनकी वैज्ञानिकता वर्तमान विज्ञान के सन्दर्भ में समझ कर प्रयोग के योग्य बनाना मेरे लिये बहुत बड़ी चुनौती है।

मेरे आदरणीय बन्धुओ ! मैं समझता हूँ कि अब मेरे विचारों से आप समझ गये होंगे कि मैं जिस कार्य को कर रहा हूँ वह मूल को बचाने जैसा कार्य है। इस हेतु मैं अपना तन-मन-आत्मा का पूर्ण समर्पण कर चुका हूँ। मुझे वैदिक वाङ्मय तथा आधुनिकतम विज्ञान का स्वयं ही अध्ययन करना होता है। इस सबके साथ स्वास्थ्य को वर्षों से सम्भालकर रखता हूँ। शरीर के साथ अनेक दुर्घटनायें घटी है। शीर्षस्थ आर्यजनों का विशेष सहयोग मुझे नहीं मिल रहा जबकि कुछ मेरे कार्य से जुड़ रहे हैं। हमारे यहाँ भवनों, उत्सवों अन्य प्रदर्शनों तथा पारस्परिक विवादों पर कितना व्यय होता है परन्तु पता नहीं क्यों इस नींव के कार्य के लिये विशेष सहयोग मिल नहीं रहा। क्यों कई बड़े बड़े सिद्धान्त व्याख्या मेरे मित्र यहाँ मुझसे दूरी बनाये हैं।

मैं सभी वेद व ऋशिभक्त आर्यों, सनातनी कहलाने वाले पौराणिकों देव ऋशि संस्कृति पर गर्व करने वाले भाइयों, आधुनिक विज्ञान के अध्यापक व अध्येताओं तथा मानवता वा सत्य–न्याय–करूणा की बात करने वाले मित्रों से निवेदन करता हूँ कि आप सभी महानुभाव मेरे इस लेख को पढ़कर मेरी अन्तर्वेदना को पहिचानने का प्रयास करें। मुझसे मेरे परिचितों का कहीं मतभेद भी हो सकता है परन्तु मनभेद करना मेरा कार्य कभी नहीं रहा। मैं तो सत्य-ग्रहण तथा असत्य-परित्याग की प्रतिज्ञा के साथ ईसाई, मुसलमानों से भी मतभेद मिटाने तथा मानवता की रक्षा हेतु शास्त्रार्थ, लेखन व संवाद करता रहा हूँ तब आर्य समाज वा पौराणिक तो वेद के निकट ही है। आर्य समाजी तो एक गुरू ऋषि दयानन्द के शिष्य हैं फिर उनमें विवाद कहाँ रह गया ? कहीं कुछ स्वार्थ, हठ वा दूषित भावनायें ही इसका कारण हो सकती हैं। आओ ! मेरे भ्राताओ ! सत्य को ग्रहण कर हठ, दुराग्रह, स्वार्थ तथा दूषित भावों को त्यागकर मेरे कार्य में सहयोगी बनकर अपने

कर्तव्य का निर्वहन करो । मैं सबका ही सहयोग चाहता हूँ । संसार का प्रत्येक व्यक्ति मेरा है क्योंकि सभी एक पिता की संतान हैं । हाँ, उसे भी ऐसा समझना होगा ।

मेरे संसार भर के वैदिक विद्वानों, महान् वैज्ञानिकों, पूज्य संन्यासी वानप्रस्थ महानुभावों, ब्रह्मचारियों एवं वैदिक सनातन धर्म के जयघोष करने वाले आर्य व पौराणिक भाइयों ! ध्यान देकर सुनो कि हमने महाशिवरात्रि (ऋषि दयानन्द बोध दिवस) वि. सं. २०६२ दिनांक 26 फरवरी 2006 को एक भीषण व्रत लिया था जो इस प्रकार था -

"मैं आगामी १२ वर्षों में अमरीका, जर्मनी, जापान, कनाडा, फ्रांस, ब्रिटेन, रूस आदि विश्व के विकसित देशों के वैज्ञानिकों के मध्य वेद की अपौरूषेयता (ईश्वरीयता) व वैज्ञानिकता को सिद्ध कर दूंगा । इस हेतु सृष्टि विज्ञान, परमाणु नाभिकीय कण भौतिकी आदि के क्षेत्र में वैदिक विज्ञान के माध्यम से वर्तमान भौतिक विज्ञान को नयी दिशा देने का यत्न करूंगा और यदि ऐसा नहीं कर पाया तो अपने नश्वर शरीर का त्याग कर दूंगा ।"

मेरे देह त्याग वाले विचार के विरोध स्वरूप मुझे अनेक फोन व पत्र मिले । मेरे हितचिन्तकों ने मेरे इस व्रत के विरूद्ध लेख लिखे परन्तु मैं अडिग रहा । सबको यही चिन्ता थी कि यदि लक्ष्य के किनारे पर पहुँचते ही समय सीमा व्यतीत हो गयी तो सारे जीवन की कमाई समाप्त हो जायेगी । जिस भावना से लोग दानादि दे रहे हैं, उनका पुण्य व्यर्थ हो जायेगा । न केवल वैदिक विद्वान् व आर्य कार्यकर्ता अपितु भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र के कुछ हितैषी आर्य वैज्ञानिक भी इस अभूतपूर्व कार्य के लिये 12 वर्ष का समय बहुत कम मान रहे थे । दिनांक 06-02-08 को यहाँ आयोजित वेद-धर्म विज्ञान सम्मेलन के अवसर पर विश्वविख्यात मनुस्मृति भाष्यकार मान्यवर डॉ. सुरेन्द्रकुमार जी, न्यास के संरक्षक श्रद्धेय श्री आचार्य स्वदेशजी, भौतिक वैज्ञानिक मा. डॉ. वसन्तकुमारजी मदनसुरे तथा कई प्रान्तों से पधारे आर्यजनों, न्यासियों, दानदाताओं ने भारी दबाव देकर मुझे देह त्याग वाले विचार से पृथक होने को विवश कर दिया।

वर्तमान में मेरा संकल्प निम्नानुसार है

1. समय सीमा सामान्यतया पूर्ववत रहेगा ।

2. यदि इस अवधि में लक्ष्य प्राप्त न कर सका तो आगामी 3 वर्ष (2021 सन् वि. सं. 2077 की महाशिवरात्रि) और भी कठोर तप कर लक्ष्य प्राप्ति का प्रयास करूंगा ।
3. लक्ष्य प्राप्ति तक किसी भी प्रकार का कहीं भी सम्मान यथा माला, शॉल, अभिनन्दन पत्र कोई पुरस्कार आदि का ग्रहण नहीं करूंगा ।
4. यदि इस अवधि में भी लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सका तो न्यास का प्रमुख व आचार्य पद को त्यागकर उस समय जैसा बुद्धि को उचित प्रतीत होगा वैसा करूंगा परन्तु स्वच्छया देह त्याग नहीं करूंगा ।

मित्रो ! मैंने अपना जीवन इसी लक्ष्य हेतु समर्पित कर दिया है । यदि मैं अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफल रहा तो अनेक युवा विद्वान् इस लक्ष्य पर चलकर एक महान् कार्य करने में समर्थ हो सकेंगे । उनका मार्ग स्पष्ट होगा । आगे की पीढ़ी को यह मार्ग बहुत लाभदायक रहेगा । यदि मैं पूर्ण सफल न भी रहा तो भी इतना मार्ग अवश्य बना जाऊंगा कि प्रतिभाशाली एवं पुरूषार्थी विद्वान् वेद की प्रमाणिकता को विश्व को बतला सकेंगे । अन्त में मैं वैदिक जगत् के सभी मूर्धन्य संन्यासियों, योग्य विद्वानों, वानप्रस्थों, धर्माचार्यों, ब्रह्मचारियों आदि की सेवा में निवेदन करना चाहता हूँ कि मेरा कार्य वा व्रत आप किसी के भी अच्छे कार्य का विरोधी वा समानान्तर नहीं है । वर्तमान में वेद प्रचार क्षेत्र में जो हो रहा है, उसका भी अपना महत्व है । न केवल आपके कार्य बल्कि सामान्य भजनोपदेशक, आर्य वीर दल कार्यकर्ता, अन्य प्रचारकों, कार्यकर्ताओं के साथ पुस्तक विक्रेताओं के कार्य का भी मैं अभिनन्दन करता हूँ। पौराणिक भाईयों में वेद पाठ की परम्परा के निर्वाहकों का भी मैं अभिनन्दन करता हूँ। मेरा यह लेख किसी की भावना को आहत करने के लिये नहीं बल्कि सबको आत्म-चिन्तन करने के लिये प्रेरित करने के लिये है । आप फूल, पत्तियों की साज, सँवार करो वृक्ष के मधुर फल चुनने, खाने व बाँटने की इच्छा करो, मैं जड़ों को सींचने का व्रत ले चुका हूँ । मैं आपकी सुदृढ़ बाड़ बनकर पाश्चात्य वैज्ञानिकता एवं नास्तिकता से रक्षा के लिये कृतसंकल्प हूँ । मैं विज्ञान और अध्यात्म दोनों को मिलाने का व्रत लेकर चला हूँ, जो इस समय परस्पर विरोधी बने हुये हैं । आशा है कि यह महान् कार्य आपके उदार सहयोग से सिद्ध हो जायेगा । मेरा आत्मा अब तक केवल चार वर्ष के अनुभव के आधार पर यह कहती है कि यदि आर्थिक वा

स्वास्थ्य सम्बन्धी बाधायें नहीं आयी तो मैं अपना लक्ष्य अवश्य प्राप्त करके विश्व भर के वेद भक्तों के सोये स्वाभिमान को जगाने में सफल होऊँगा। हमारे संरक्षक महोदय जिस आत्मीयता से कृपा दृष्टि बनाये हुये हैं । हमारे समस्त मानद सहयोगी संरक्षक महानुभाव जिस श्रद्धा व स्नेहभाव से इस न्यास के विकास हेतु समुत्सुक हैं । हमारे भामाशाह स्वरूप सभी सहयोगी संरक्षक तथा अन्य सभी दानवीर महानुभाव

जिस श्रद्धा से निःस्वार्थ भाव से अपना पावन आर्थिक सहयोग कर रहे हैं । आर्य समाज की भारत भर में सर्वप्रथम आर्य समाज विशेषकर महिला आर्य समाज, सैक्टर-७ फरीदाबाद (हरियाणा) ही सहयोग के लिये कुछ आगे आयी थी । हमारे कार्य का मूल्यांकन करके आर्य समाज, कांकरिया, अहमदाबाद, जोधपुर, पानीपत, मथुरा, विदिशा आदि कई स्थानों के आर्यों की इस ओर रूचि उन्पन्न हुई है व न्यास से जुड़ रहे व सहयोग हेतु आगे आ रहे हैं ।

मेरे समस्त प्रिय न्यासी तथा अन्य कार्यकर्तागण जिस श्रद्धा भावना से तन-मन व धन तीनों प्रकार का सहयोग पूर्ण निष्काम भाव से कर रहे हैं और सभी यह आशा कर रहे हैं कि मैं अपने लक्ष्य को प्राप्त करके न्यास को यशस्वी बना सकूँ, परमात्म-कृपया आशा है कि उपर्युक्त सभी महानुभावों की वह इच्छा, भावना अवश्य पूर्ण होगी । मेरा कार्य पूर्ण पुरूषार्थ करना है, वह मैं करूंगा, फिर दैवेच्छा बलीयसी । विशेष निवेदन है कि अनेक विद्वान् वा सामान्य कार्यकर्ता मुझे परामर्श देते हैं कि मैं भ्रमण कर करके अपने कार्य के महत्व को समझाऊँ अन्यथा बिना जाने कैसे कोई सहयोग करे ? विज्ञप्तियों व पुस्तक के पढ़ने से लक्ष्य की महत्ता सबकी सबकी समझ में नहीं आती । मैं ऐसे हितैषी महानुभावों की सेवा में निवेदन करता हूँ कि यदि मैं भ्रमण करके अपने लक्ष्य की जानकारी देने में व्यस्त रहा तो धन भले ही मिल जाये परन्तु अध्ययन में भारी बाधा आ जाने से लक्ष्य प्राप्त करना कठिन हो जायेगा । मेरे सम्मुख एक समय सीमा है, इस कारण मेरा सभी से निवेदन है कि मेरे इन विचारों का आप सब हितैषी व देशभक्त जन सर्वत्र प्रचार करें। इन्हें अपनी-अपनी ओर से प्रकाशित करवाकर सबको बाँटे, तो आपका बड़ा पुण्य कार्य होगा । जो छपवा न सकें वे यहाँ से मंगवा कर बाँटें । प्रभु आपको निष्पक्ष, विमल व उदार बुद्धि प्रदान करें तथा मुझे स्वास्थ्य व मेधाबुद्धि प्रदान करें । वयोवृद्ध एवं ज्ञानवृद्धों का आशीर्वाद मिले, संसार के सभी मानव परस्पर मिलकर सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करके एक परिवार की भाँति रहते हुये चिर आनन्द को प्राप्त करें, इसी कामना व भावना के साथ......।

।। ओ३म् ।।

विद्वानों, वैज्ञानिकों एवं सहयोगी जनों की सेवा में विचारार्थ -

वेद विज्ञान शोध प्रक्रिया

१६ दिसम्बर ०६ को गुजरात के सूरत महानगरस्थ वीर नर्मद दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय के भौतिक विज्ञान विभाग तथा तुलनात्मक साहित्य विभाग ने संयुक्त रूप से "सृष्टि का मूल उपादान कारण" विषय पर मेरा व्याख्यान आयोजित किया। पिछले लगभग ८५ वर्ष पूर्व जाने गये ब्रह्माण्ड के प्रसारण से लेकर सितम्बर ०६ में बिंग बैंग थ्यौरी की पुष्टि में दो अमरीकी भौतिक शास्त्रियों को नोबेल पुरस्कार मिलने तक की समयावधि में अनेक प्रसिद्ध वैज्ञानिक धारणाओं का पूर्ण वैज्ञानिकता से मैंने विस्तार से खण्डन किया। इस पर विश्वविद्यालय के उपकुलपति प्रो. जयेश जी. देशकर ने कहा कि आज आपने हमारे सारे बिन्दुओं को हिला दिया है। प्रोफेसरों तथा छात्र-छात्राओं ने इच्छानुसार प्रश्न किये और उन्हें सन्तोषजनक समाधान मिला। परिणाम यह रहा कि उपकुलपति महोदय, भौतिक विज्ञान के विभागाध्यक्ष प्रो. के. सी. पोरिया, अन्य प्राध्यापक व छात्र-छात्राओं तक ने मुझसे यह अपेक्षा की कि मैं वैदिक फिजिक्स पर ऐसी पुस्तक लिखूं जो वर्तमान भौतिकी को नयी दिशा दे सके तथा उस पुस्तक को विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में ही सम्मिलित किया जाये। विशेषकर छात्र इस बात पर बैचेन थे कि वे जो पढ़ रहे हैं उसका खण्डन हमने विज्ञान के ही सूत्रों व तर्कों से कर दिया तब उन्होंने सभा में ही खड़े होकर कहा कि हम जो गलत पढ़ रहे हैं उसका क्या होवे ? और आपने (अर्थात् हमने) जो वैदिक सिद्धान्तों की वैज्ञानिकता दर्शायी है वह हमें कैसे पढ़ने को मिले ? कैसे पाठ्यक्रम में यह आये ? भौतिकी विभागाध्यक्ष प्रो. के. सी. पोरियाजी से दूरभाष पर हुयी चर्चा से ज्ञात हुआ कि हमारे व्याख्यान पर वहां के प्रोफेसर्स व छात्रों में यही चर्चा होती रही कि हम उन्हें वैदिक फिजिक्स के विशिष्ट सूत्र विश्वविद्यालय को सतत देते रहें जिनसे आधुनिक फिजिक्स की न्यूनताओं को दूर किया जा सके।

वैज्ञानिक मित्रों तथा देश के भावी कर्णधार विज्ञान के छात्रों के द्वारा मिला स्नेह, सम्मान व आत्मीयता का मुझे सुखद अनुभव हुआ। ऐसा आत्मीय भाव सर्वथा अपरिचित महानुभावों से मिला जो निरन्तर सम्पर्क में रहे आर्य बन्धुओं से भी नहीं मिलता। इस बात से मैं सन्तुष्ट हूं और मेरा विश्वास बढ़ा है कि मैं अपने निर्धारित समय महाशिवरात्रि वि. सं. २०७७ तद्नुसार सन् २०२१ तक विश्व के विकसित देशों

के वैज्ञानिकों के मध्य आधुनिक विज्ञान की न्यूनताओं को खोजकर उनका समाधान वेद से दे सकूंगा । विशेषकर [illegible] न्यूक्लियर-पार्टिकल-एस्ट्रो-फिजिक्स एवं सृष्टि विज्ञान के क्षेत्रों में । इससे वेद की औरूषेयता व सर्वज्ञानमयता सिद्ध हो सकेगी ।

आज की स्थिति पर विचार करता हूँ तो मैं ऐसी स्थिति में खड़ा हूं कि एक ओर वैज्ञानिक मित्र व विज्ञान की उच्च कक्षाओं के छात्र मुझसे तत्काल ही कोई क्रान्तिकारी पुस्तक लिखने की अपेक्षा व आग्रह कर रहे हैं वहीं अनेक वैदिक विद्वान् भी मेरे लक्ष्य की प्राप्ति की आशा कर रहे हैं । इनमें सर्वाधिक आशा हमारे न्यास के संरक्षक श्रद्धेय आचार्य स्वदेशजी महाराज, वेद मन्दिर, मथुरा जिन्होंने मुझे कुछ व्याकरण भी पढ़ाया है तथा दूसरे आर्य जगत् के गौरव पूज्य आचार्य श्रीमद् विशुद्धानन्दजी मित्र महाराज, बदायूं को है । इसके अतिरिक्त अन्य भी अनेक विद्वान महानुभाव, दानदाता, न्यासी, सहयोगी, संरक्षक महानुभाव भी ऐसी अपेक्षा रखते हैं। कोई-कोई शंकायें भी करते हैं, तो कोई व्यंग्य व उपेक्षा भी करते हैं । सूरत के श्री निर्मलेशजी आर्य का आग्रह यह था कि मैं भारत के प्रत्येक विश्वविद्यालय के भौतिक विज्ञान विभाग में इसी प्रकार व्याख्यान दूं जिससे सैंकड़ों वैज्ञानिक मित्र सुलभ हो सकें फिर धीरे-धीरे समयानुसार विदेशों में भी वैज्ञानिक संस्थानों में जाने का प्रयत्न करूं ।

इन सब बातों पर विचार करके मैंने यही निश्चय किया है कि मैं अपनी योजना व प्रक्रिया को सब हितैषी महानुभावों को अवगत करा दूं जिससे वे महानुभाव अधिक शीघ्रता व अपेक्षा न करें अपितु धैर्यपूर्वक मेरे कार्य की प्रतीक्षा करें साथ ही मेरे इस मौन पर भी अपना कृपाभाव बनाये रखें । वेद विज्ञान पर जो वर्तमान में लिखा व सुना जा रहा है अथवा जैसे मैं 'सृष्टि का मूल उपादान कारण' नामक लघु प्रस्तिका को लिखा है, वैसा मैं कुछ प्रयत्न से अब भी लिखना प्रारम्भ कर सकता हूं परन्तु मेरे वर्तमान में निकाले निष्कर्ष का भविष्य में वा वर्तमान में भी कोई प्रतिभा सम्पन्न विद्वान् खण्डन भी कर सकता है क्योंकि मैंने वेद को अभी विचारा तो क्या योग्यतापूर्वक प्रवेश भी नहीं किया है । मैं चाहता हूं कि जब तक मैं वेद पर विचार नहीं कर लेता हूँ तब तक कुछ भी लिखना बहुत प्रामाणिक नहीं होगा । **मैं भविष्य में ऐसे स्तर का ही ग्रन्थ लिखने की इच्छा करता हूँ जो सृष्टि की सम्पूर्ण प्रक्रिया को व्याख्यात कर सके । इसमें मूल कण को बनने से लेकर सम्पूर्ण सृजन तक के विभिन्न चरणों की पूर्ण व्याख्या हो । वैदिक विज्ञान द्वारा विशुद्ध तथा असंदिग्ध एटमिक मॉडल प्रस्तुत किया जा सके । जहां-जहां आधुनिक विज्ञान असहाय सिद्ध होता है, वहां उसे सहयोग देकर आगे निष्कटक मार्ग पर उसे चलाया जा सके । इस कार्य के लिये मैं समय, साथी, सहयोग, धनादि संसाधन सबकी**

आवश्यकता अनुभव करता हूँ और वही ग्रन्थ मेरे संकल्प को पूर्ण करने वाला बनकर विश्व भर के वैज्ञानिकों के लिये एक प्रबल चुनौती बनकर उन्हें अपन मित्र बना सके। अब मैं विभिन्न क्षेत्रों के विद्वानों की सेवा में अपना मन्तव्य निवेदन करता हूँ ।

(1) आधुनिक वैज्ञानिक, प्रोफेसर्स एंवं छात्रों से :–

यह बात तो मेरे लिए लाभप्रद है कि एक विश्वविद्यालय के विज्ञान विभाग के सभी सदस्यों, छात्रों तथा स्वयं उपकुलपति महोदय ने मुझसे यह अपेक्षा की है। विश्व प्रसिद्ध भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, ट्राम्बे (मुम्बई) के थ्यौरीटीकल एस्ट्रो फिजिक्स सैक्शन के हैड अन्तर्राष्ट्रिय स्तर के वैज्ञानिक डॉ. आभासकुमारजी मित्रा साहब ने मेरी सफलता की आशा की है । मान्या डॉ. सविताजी गौड़, प्रोफेसर, अध्यक्षा तुलनात्मक साहित्य विभाग, सूरत विश्वविद्यालय ने इच्छा व्यक्त की है कि मैं शीघ्र ही अन्तर्राष्ट्रिय स्तर पर शोध कर रहे वैदिक विद्वानों, वैज्ञानिकों व मीडिया से तुरन्त सम्पर्कित हो सकूं जिससे वे मेरे सहयोगी बन सकें । डॉ. सविताजी के ही प्रयासों से सूरत का कार्यक्रंम बनाया गया जिसमें हमारे न्यास के तत्कालीन सहयोगी संरक्षक स्व. श्री अशोककुमार बंसल का विशेष आग्रह रहा । वहां के छात्रों में विशेष उत्साह तथा व्यग्रता देखी । इस सब पर चिन्तन करके अपने इन सभी आत्मीय महानुभावों तथा युवकों की सेवा में यह लेख प्रस्तुत कर रहा हूँ ।

मैं आप सभी की आत्मीयता व सत्यासत्य विवेक की इच्छा का भूरिशः सम्मान करते हुये निवेदन कर रहा हूँ कि वेद में विज्ञान इस प्रकार लिखा हुआ नहीं है जिस प्रकार विज्ञान के ग्रन्थों में लिखा रहता है । वेद में अत्यन्त संकेत रूप में सभी विज्ञानों का मूल विद्यमान है जिन्हें समझना अति दुष्कर, समय साध्य, श्रम साध्य कार्य है । जिस प्रकार विज्ञान व गणित में सूत्र होते हैं, उस प्रकार का सूत्र रूप भी वैदिक वाङ्मय में नहीं है। इसलिये वेद के विज्ञान को समझने हेतु एक निश्चित व लम्बी प्रक्रिया से गुजरना होता है । व्याकरण, निरूक्त, छन्द, ज्योतिष, शिक्षा, कल्प, ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद्, मनुस्मृति, महाभारत आदि विषयों वा ग्रन्थों के जान कर ही वेद में प्रवेश सम्भव है । इसके साथ सतत योगाभ्यास (हठयोग के प्रचलित आसन व प्राणायाम का नाम योगाभ्यास नहीं है, यह ध्यान रहे), वैज्ञानिक सूक्ष्म ऊहा व तर्क के उच्च स्तर को प्राप्त करके ही वैदिक विज्ञान के यथार्थ को समझा जा सकता है । इस कसौटी पर एक ही वेद भाष्यकार खरे उतरते हैं, वे हैं महर्षि दयानन्द सरस्वतीजी महाराज । महर्षि प्रवर ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में २१ वर्ष में वेद पढ़ने का क्रम बताया है । इधर मैंने अपने लक्ष्य की सीमा महाशिवरात्रि वि. सं. २०७७ (सन् २०२१) रखी है जिसमें से एक वर्ष व्यतीत होने जा रहा है । इस अल्पकाल में ऋषि निर्दिष्ट शास्त्रों के साथ-साथ

आधुनिक भौतिकी की गहराईयों को समझना वह भी विना किसी मार्गदर्शन के तथा अर्थभाव में कितना दुष्कर कार्य है, यह आप सभी अनुभव कर सकते हैं । मैं मानता हूँ कि वेद से इतर सभी ग्रन्थ अपूर्ण हैं। इसी कारण भगवद् दयानन्दजी महाराज ने वेदेतर ग्रन्थों अर्थात् आर्ष ग्रन्थों को परतः प्रमाण कहा है, स्वतः नहीं । किसी भी विज्ञान के अन्तिम परिणाम को वेद से ही प्राप्त किया जा सकता है । इस कारण वेदेतर अन्य शास्त्रों (आर्ष होने पर भी) के अध्ययनकाल में इन्हीं के आधार पर वैदिक विज्ञान पर कोई प्रामाणिक ग्रन्थ लिखना अन्धेरे में तीर चलाने के समान है । जो महानुभाव इन शास्त्रों (आर्ष) को भुलाकर साधारण संस्कृत व्याकरण ज्ञान के आधार पर वेद का अर्थ करने का प्रयास करते हैं वे और भी घातक परिणाम प्राप्त करते हैं अर्थात् उनका प्रयास वेद पर आघात जैसा होता है । इन सब प्रयासों से कोई सत्य-विज्ञान प्रकाशित हो सकेगा, यह एक कल्पना ही है । इस प्रयास में लगे विद्वान्, वेदार्थ क्या समझेंगे, हां वेद पर अनेक शंकायें अवश्य उठा सकते हैं अन्यथा अन्यों को शंका के अनेक स्थान व्यर्थ में ही उपलब्ध कराते हैं । सम्भव है कि किसी अन्धे के हाथ कोई बटेर लग भी जाये परन्तु कोई विशेष लाभकारी बात नहीं ।

इसी कारण मैं अपने प्रशंसक महानुभावों से निवेदन कर रहा हूं कि न्यूनतम ७-८ वर्ष पश्चात् ही मैं कुछ लिखने की भावना रखता हूँ । वेद पर विचार करने के उपरान्त जो लिखा जायेगा, वह निश्चित ही विश्व के वैज्ञानिक क्षेत्र में क्रान्तिकारी कदम होगा । मैं संसार भर के वैज्ञानिक संस्थाओं को आत्म विश्वास के साथ कह सकूंगा कि इस ग्रन्थ को पाठ्यक्रम में रखा जाये, ऐसा मैं ईश कृपा से विश्वास करता हूँ । अभी मेरे द्वारा लिखित पुस्तक **'Basic Material Cause of the Creation'** सामान्य स्तर की पुस्तक है जिसमें कुछ न्यूनतायें वा अस्पष्टतायें रह गयी हैं । अब तो मैं सभी से ७-८ वर्ष का समय तो चाहता ही हूँ । तब तक आप सभी धैर्य पूर्वक प्रतीक्षा करने की कृपा करें । इसके साथ ही आप सभी से निवेदन है कि मेरे विषय से सम्बन्धित वर्तमान विज्ञान में कोई भी नया अनुसंधान होवे तो उसकी जानकारी सप्रमाण मुझे उपलब्ध कराने का कष्ट करें । मेरे पास सूचना व संसाधनों का अभाव है एतदर्थ ही आपका सहयोग चाहता हूँ ।

मैं न तो वेतन पाता हूँ और न कोई व्यवसाय है, न ही मैं प्रचारार्थ जाता हूँ जिससे कुछ दक्षिणादि मिल सके । न कोई प्रयोगशाला है, न वांछित पुस्तकें । ऐसे में कैसे विशेष अध्ययन व अनुसंधान होगा यह आप सभी सोच सकते हैं । पुनरपि मैं

ईश्वर विश्वास एवं कुछेक सहयोगियों के आधार पर इस कार्य पर अग्रसर हूँ । भविष्य में मुझे आप सब वैज्ञानिक मित्रों के साथ मिलकर कार्य करना ही है । हम वैदिक तथा आप वैज्ञानिक मिल कर संसार को सुखमय बना सकते हैं ।

(2) वेद विज्ञान क्षेत्र में शोधरत विज्ञान के प्रोफेसरों तथा विशुद्ध वैदिक शोधकर्त्ताओं से :–

अनेक विज्ञान के विद्वान् वैदिक विज्ञान में रूचि ले रहे हैं, यह सुखद सूचना है। बैंगलोर के अन्तर्राष्ट्रीय वेद विज्ञान सम्मेलन में मैंने कई देशों के भौतिक शास्त्रियों को वेद विज्ञान पर पत्रवाचन करते देखा है । दुःख इस बात का है कि वे वेदानुसंधानकर्त्ता वराहमिहिरि, आर्य्यभट्ट, भास्कराचार्य, चरक, सुश्रुत, ब्रह्मगुप्त, नागार्जुन आदि के विज्ञान तक ही सीमित हैं । ये सभी आचार्य मध्यकालीन हैं । प्राचीन ऋषि महर्षियों तथा वेद का विज्ञान इनसे बहुत अग्रणी है जिसकी ओर इनकी गति नहीं है । मैं मानता हूँ कि उपर्युक्त आचार्यों के उद्धरणों से हम संसार को इतना तो बता सकते हैं कि सैंकड़ों, हजारों वर्ष पूर्व भारतीय ज्ञान विज्ञान विश्व के अन्य देशों के विज्ञान से बहुत आगे था परन्तु इस विज्ञान के बल पर आज अमरीका, जर्मनी, फ्रांस, जापान जैसे देशों के विकसित विज्ञान को कुछ दे नहीं सकते और न उन्हें प्रभावित ही कर सकते हैं । इसलिये वेद तथा प्राचीन आर्ष विज्ञान पर ही केन्द्रित रहना होगा । आज कुछ विद्वान् जो आधुनिक विज्ञांन, गणित आदि के विशेषज्ञ हैं, वेद तक भी काम कर रहे हैं परन्तु उन्हें वैदिक भाषा का व्याकरण तथा अंग, उपांग, ब्राह्मण ग्रन्थ, इतिहास आदि की जानकारी नहीं होने से वे वेद में वर्तमान फिजिक्स को खोजने का यत्न करते हैं । आधुनिक फिजिक्स की अवधारणायें अनेक मस्तिष्क पटल पर अंकित होती है उन्हें ढूंढने हेतु वैदिक पदों के सामान्य व्याकरण के आधार पर अर्थ करते हैं । यह वेद के साथ न्याय नहीं है। मैंने इन्जीनियरिंग कालेज के सेवानिवृत प्राचार्य, संस्कृत व विज्ञान के विद्वानों को वेद के मन्त्रों को उद्धृत करके बिना बैंग थ्यौरी की पुष्टि करते देखा व पढ़ा है तो किन्हीं को स्टीफन हॉकिंस साहब के ही गीत गाते देखा है । मानों हॉकिंस साहब ही वेद के प्रामाणिक भष्यकार हों तथा परम सत्य उन्हें ही पता हो । यह प्रयास मुझे शोध नहीं, नकल प्रतीत होता है ।

मान्यवर ! मैं भी स्टीफन हॉकिंस साहब ही नहीं अपितु अनेकों महान् वैज्ञानिकों यथा सर अलबर्ट आंइस्टाइन, सर आइजक न्यूटन, मैक्स प्लाँक आदि का प्रशंसक हूँ ।

परन्तु बुद्धि नेत्र बन्द करके इनकी बातों को यथावत् स्वीकार नहीं करता।

जिस बिग बैंग थ्यौरी पर मैं ऐसे अनेकों प्रश्न खड़े कर सकता हूँ जिनका उत्तर विश्व के वैज्ञानिक नहीं दे सकते, ऐसा मुझे विश्वास है, उस बिग बैंग के समर्थक वेद मन्त्र उपस्थित करना घोर दुस्साहस व नकल की प्रवृति का प्रबल उदाहरण है। अब तक मैं कई आधुनिक वैज्ञानिकों के समक्ष साक्षात् वा पत्र व पुस्तक द्वारा इन प्रश्नों को प्रस्तुत कर चुका हूँ। इनमें से ४ तो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के वैज्ञानिक हैं जैसे (१) विश्व प्रसिद्ध खगोल वैज्ञानिक पद्म विभूषण डॉ. जयन्त विष्णुजी नार्लीकर (२) श्री डॉ. वी. एस. अरूणाचलम् (शायद ये भी पद्म विभूषण से सम्मानित हैं) पूर्व वैज्ञानिक सलाहकार, रक्षा मन्त्री, भारत सरकार (३) प्रो. अजीतराम जी वर्मा (पद्म विभूषण) (४) डॉ. आभासकुमार जी मित्रा। इनके अतिरिक्त देश-विदेश के अनेक वैज्ञानिकों जिनमें विश्वप्रसिद्ध स्टीफन हॉकिंस साहब भी सम्मिलित हैं तथा अमरीका, पोलेण्ड, आयरलैण्ड व आस्ट्रिया के भी कुछ वैज्ञानिकों को अपनी पुस्तक भेज चुका हूँ। यह अनुमान स्वाभाविक है कि उन्होंने पुस्तक पढ़ी ही नहीं होगी परन्तु कुछ से तो साक्षात् भी मिला हूँ तथा नार्लीकर साहब से पत्र व्यवहार भी हुआ है परन्तु मेरे प्रश्नों का समाधान कोई भी बिग बैंग थ्यौरी का समर्थन नहीं दे सका है।

मान्यवर ! मैं केवल प्रश्नों को खड़े ही नहीं करता हूँ अपितु उन प्रश्नों को अवकाश ही न देने वाला विचार भी वैदिक वाङ्मय से देता हूँ। ऐसी बिग बैंग थ्यौरी को वेद में ढूंढना मुझे घोर दुस्साहस ही प्रतीत होता है। मैं उन शोधकर्त्ताओ चाहे उनका मूल विषय आधुनिक विज्ञान हो अथवा विशुद्ध वैदिक विद्वान् हों, से निवेदन करता हूँ कि वे जिस वैज्ञानिक धारणा को प्रमाण मानकर वेद में ढूंढ़ते हैं, यह धारणा यदि अन्य किसी वैज्ञानिक ने मिथ्या सिद्ध कर दी तब उस वेद विज्ञान का क्या होगा ? क्या विज्ञान के परिवर्तन के साथ-साथ वेद का विज्ञान भी परिवर्तित करते रहना होगा ? तब क्या वह उनका विज्ञान वास्तव में वेद का विज्ञान होगा अथवा वेद का आवरण ओढ़े शोधकर्त्ता की अपनी धारणा होगी जो आधुनिक विज्ञान के संस्कार के कारण बनाई है। फिर यह भी ध्यातव्य है कि ऐसा शोध हमें वेद विरोधी वा तटस्थ वैज्ञानिकों के उपहास का पात्र बनाता है।"

इस कारण ऐसे शोधकर्त्ताओं से मेरा आग्रह है कि वे विज्ञान चकाचौंध से अपने नेत्रों को बन्द न करें। वेद में ही विशुद्ध विज्ञान को खोजने का यत्न करें। नकल न करें। आधुनिक विज्ञान हमारा मित्र है परन्तु वह अन्तिम प्रमाण नहीं है क्योंकि वह सदैव

परिवर्तनशील है। उसमें प्रयोगात्मक निष्कर्ष ही एकमात्र आधार माना जाता है। हम उससे अपने वेद विज्ञान की तुलना तो करें। समानता प्रतीत होती है तो अच्छा और नहीं भी प्रतीत होती है तब भी घबराने की कोई बात नहीं।

भारतीय परम्परा वेद को ईश्वरीय ज्ञान मानती है। तब इसमें संशोधन वा परिवर्तन सम्भव नहीं है। इस कारण इसे आधुनिक विज्ञान के पीछे अन्धे होकर चलाना उचित व न्याय्य नहीं है। हमें वेद को सनातन आर्ष प्रक्रियानुसार ही पढ़ना होगा, तभी वास्तविक तत्व की प्राप्ति हो सकेगी। केवल तात्कालिक चर्चित होने के लिये सामान्य संस्कृत व्याकरण वा आधुनिक विज्ञान की सीढ़ी के सहारें वेदार्थ करने लग जाना सत्यान्वेषण नहीं कहा जा सकता। इसी कारण मैंने वेद भाष्य पढ़ना, पत्रवाचन, प्रवचन, लेखन आदि कार्य बन्द कर दिया है। अब प्रक्रियानुसार ही स्वयं एकाकी चलना प्रारम्भ किया है। विधिपूर्वक इसे भी पढ़ना समय व साधनाभाव से नहीं हो पा रहा है परन्तु अपने लक्ष्य को देखते हुये जितना मैं वर्तमान बुद्धि के अनुसार अत्यावश्यक समझता हूँ, विहंगावलोकित्त करने का यत्न कर रहा हूँ। अंग्रेजी व संस्कृत दोनों ही भाषाओं का विशेष ज्ञान नहीं होने से तथा कोई भी पढ़ाने वाला तो क्या चर्चा तक करने वाला नहीं होने से, समय सीमा निर्धारित कर चुकने से भारी कठिनाई है। आवश्यकता तो यह है कि एक-दो वैदिक वाङ्मय के प्रतिभाशाली विद्वान् जिन्होंने उपरिसमीक्षित पद्धति से आर्ष ग्रन्थों का अध्ययन किया है तथा एक भौतिक शास्त्री जो प्रतिभा सम्पन्न हो, दोनों मेरे साथ हों तो मैं अपने प्रयास से दोनों का लाभ लेकर लक्ष्य को समय से पूर्व प्राप्त कर सकता हूँ परन्तु दोनों ही प्रकार को विद्वानों को आर्कषक वेतन के बिना रखा ही कैसे जा सकता है। धनाभाव के रहते यह सम्भव नहीं, इस कारण एकाकी चलने को विवश हूँ। हाँ, यह बात अवश्य है कि वेद की ईश्वरीयता का सिद्धान्त हमें अन्यमति रखने वाले महानुभावों के ऊपर बलात् थोपने का प्रयास नहीं करना चाहिये बल्कि उसके ईश्वरीय होने के ठोस प्रमाण संसार को देने का प्रयास करना चाहिये। यही मेरी शोध का मुख्य ध्येय है।

(3) आर्ष पद्धत्यानुसार शोध करने वाले विद्वानों से :—

निश्चित ही यही पद्धति एक मात्र वेदार्थ ज्ञानार्थ सत्य पद्धति है। जिस प्रकार अरबी भाषा के व्याकरण के बिना कुरआन नहीं समझा जा सकता। अंग्रेजी भाषा के ज्ञान के बिना अंग्रेजी साहित्य में गति सम्भव नहीं उसी प्रकार वेद की भाषा, शैली आदि भी उस भाषा के व्याकरण, निरूक्त, छन्द, स्वर, ब्राह्मण ग्रन्थ आदि के सहाय के बिना वेदार्थ का ज्ञान सम्भव नहीं। आज की भाषा को व्याकरण के अनुसार वेदार्थ करने का प्रयास उचित नहीं है। इस ध्रुव सत्य को हमें समझने

का प्रयास करना चाहिये कि व्याकरण सदैव लोक वा वेद के पीछे चलता है न कि लोक व वेद को सर्वत्र व्याकरण में पीछे चलाया जा सकता है । भाषा समयानुसार परिवर्तनीया है इसी कारण व्याकरण भी समयानुसार कुछ परिवर्तन की अपेक्षा रखता है । इसी कारण व्याकरण् शास्त्र में विकल्प, आगम, लोप, विकार आदि देखे जाते हैं । जहाँ व्याकरण वेद वा लोक को नियमबद्ध नहीं कर सका वहां आर्ष व छान्दस् प्रयोगों को साधु मान लिया जाता है । इस कारण केवल व्याकरण के आधार भी वेदार्थ करने वाले वेदार्थ तो नहीं जान पाते उलटे वेद का नाश अवश्य कर देते हैं । मैं एक भोपाली नामधारी वैदिक स्कॉलर को जानता हूँ जो सामान्य व्याकरण जानकर वेद में १८-२० वर्षों से कमियां ढूंढ़ने में लगे हैं। उन्हें अब तक सैंकड़ों व्याकरण के दोष वेद में मिले हैं, ऐसा उनका दावा है । ऐसे लोग अपनी अज्ञानता को वेद पर मढ़ते हैं । जरा, सोचें कि जो व्याकरण शास्त्र वेद विषय में 'छन्दसि बहुलम्' 'व्यत्ययो बहुलम्' कहकर अपना विकल्प प्रस्तुत करते हैं परन्तु इन स्कॉलरों को ये सूत्र ही जंगलीपन के प्रतीक दिखाई देते हैं । उन्हें वे ही व्याकरण सूत्र मान्य हैं जिनका सहारा लेकर वे वेद पर आक्रमण कर सकते हैं वे व्याकरण के उन सूत्रों को ही सत्य व शिष्ट मानते हैं । उनमें इतनी भी समझ नहीं है कि कुछ व्याकरण जंगली और कुछ शिष्ट कैसे हो गया ? अस्तु ।

छोड़ें इस चर्चा को । ऐसे वेददूषक सम्भवतः अधिक न हों इससे इनका कोई मूल्य विद्वत् समुदाय के बीच नहीं है । अब प्रश्न यह उठता है कि जो विद्वान् अहर्निश वैदिक व आर्ष साहित्य का विधिवत् अध्ययन-अध्यापन गुरुकुलों में करते हैं । अनेकों ग्रन्थों के लेखक, अनेकों को वेद में शोध कराने वाले वैदिक विद्वान् जिन्हें वेद व आर्ष ग्रन्थों पर अटूट श्रद्धा है । जिनका जीवन तप-साधना करते व्यतीत हुआ जा रहा है, जो योग साधना का भी सतत अभ्यास करते हैं। वे विद्वान् भी क्यों वेद की वैज्ञानिकता क्यों नहीं समझ पाते हैं ? क्यों किसी विज्ञान को नहीं खोज पाये हैं? क्यों वे वेद मन्त्रों के संकलन को ही शोध माने बैठे हैं ? क्यों वे आधुनिक विज्ञान के सम्मुख बौने हो गये हैं ? इस विषय में मेरा जो इस समय विचार है, उसे ऐसे पूज्य विद्वानों की सेवा में प्रस्तुत कर रहा हूँ ।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि ये विद्वान् या तो आधुनिक विज्ञान से इतने भयभीत हैं कि विज्ञान की हर बात का प्रमाण मान नतमस्तष्क ही रहते हैं तब नवीन खोज कैसे होगी ? कुछ महानुभाव आधुनिक विज्ञान को जानने का यत्न ही नहीं करते । वे केवल

भारतीयता वा वैदिकता पर गर्व करने के कारण आधुनिक विज्ञान को अपूर्ण, अनर्थकारी मानकर उसकी उपेक्षा करते हैं। वे यह भी कहते हैं कि वेद स्वयं में पूर्ण है, उसे वर्तमान विज्ञान से प्रमाणित कराने की कोई आवश्यकता नहीं है । ये विद्वान् वैदिक पदों की व्युत्पत्ति व निर्वचन प्रक्रिया तथा स्वयं की ऊहा से व्याख्या करते हैं परन्तु अभी तक कोई विज्ञान् ऐसा प्रस्तुत नहीं कर पाये जिससे किसी भी प्रकार का उपकार हो सकता है, जिसे प्रयोगात्मक रूप दिया जा सके। ये महानुभाव पाश्चात्य विज्ञान द्वारा निर्मित आविष्कारों का भरपूर लाभ लेते हुये भी उस विज्ञान को अपूर्ण व अनिष्टकारी बताकर हेय मानते हैं, यह दुःखद आश्चर्य की बात है । मैं इस प्रकार के विचार को अनावश्यक अहंकार का परिणाम मानता हूँ । इस प्रकार की विचारधारा ने वैदिक विज्ञान की खोज में बहुत बड़ी बाधा उत्पन्न की है तथा भौतिक व आध्यात्मिक विज्ञान के बीच चौड़ी खाई खोद दी है जिसके दोनों ओर खड़े अपने-अपने को पूर्ण मानने वाले परस्पर एक दूसरे को मूर्ख मानकर दूर-दूर खड़े विरोधी बन गये हैं। कोई-कोई विद्वान् जिनकी पृष्ठभूमि भी आधुनिक विज्ञान की है वे भी विज्ञान से घृणा करते हैं, उनकी मानसिकता पर दया आती है । दुर्भावनावश मुझ पर आरोप लगाते हैं कि मैं आधुनिक विज्ञान के पीछे वेद को चलाने का कुप्रयास कर रहा हूँ । जबकि मैं इसके विपरीत आधुनिक विज्ञान को वेद के पीछे चलाने की भावना रखता हूँ । वे लोग मेरे विचार पूर्णतः जाने बिना द्वेष वश ऐसे आरोप लगाते हैं । कुछ महानुभाव वेद वा वैदिक वाङ्मय को कर्मकाण्ड प्रधान ही मानकर धन्य हो रहे हैं विशेषकर हमारे पौराणिक विद्वान् बन्धु । आर्य समाज में भी कुछेक इस विचार के विद्वानों से मैं मिला हूँ , ये विद्वान् महानुभाव वेद विज्ञान की दिशा में प्रवृत होन वाले किसी उत्साही को हतोत्साहित ही करते हैं । मैं मानता हूँ कि अग्निहोत्रादि कर्मकाण्ड का पृथक् महत्व है परन्तु उसके पीछे छिपे वैज्ञानिक रहस्य को समझना उससे भी महत्वपूर्ण है । आज मैं अग्निहोत्र के विषय में अनेक कम महत्व के बिन्दुओं पर विद्वानों में गर्मागर्म विवाद (कहीं-कहीं संवाद भी) देखता हूँ जैसे-मन्त्र के प्रारम्भ में ओम् बोलना वा नहीं ? जनसेचन प्रक्रिया, समिधा धान आदि पर परन्तु मैंने कहीं इस पर चिन्तन-बहस नहीं देखी कि यज्ञ में घृत कैसा व कितना हो ? सामग्री किस रीति से ऋत्वनुकूल बनायी जाये ? समिधा कैसी व कितनी हो ? यज्ञ से कौन-कौन सी गैसें उत्पन्न होकर शरीर, वनस्पति, जल, वायु, मिट्टी पर क्या व किस प्रकार प्रभाव डालती है ? कैसे यज्ञ से वर्षा व पर्यावरण की शुद्धि होती है ? कैसे रोग नाश होता है ? इस रासायनिक विज्ञान पर कोई बहस मैंने

नहीं सुनी । नगण्य मात्रा में घृत वह भी डेयरी वा बाजार का मिलावटी घृत, कचरे के समान सामग्री, ढ़ेर सारी समिधा यह सब अग्निहोत्र का स्वरूप रह गया है । पद्धति का आग्रह इतना कि जरा सी त्रुटि हुयी कि लड़ाई-झगड़ा प्रारम्भ । यही कारण है कि जो यज्ञ महान् वैज्ञानिक प्रक्रिया का रूप था वही आज विकृत व अवैज्ञानिक हो गया है । ध्यान रहे कि मैं पद्धति की उपेक्षा की बात नहीं कर रहा हूँ परन्तु पद्धति से भी अधिक महत्वपूर्ण बिन्दु को ध्यान में ला रहा हूँ । मान लीजिये एक व्यक्ति बायें हाथ से खड़े - खड़े भोजन कर रहा है जिससे प्रायः अन्य नहीं करते तो उसका उपहास करने वाले को यह भी सोचना चाहिये कि यदि बांयें हाथ से खाने वाला पौष्टिक, सरस भोजन कर रहा है तो वह असभ्य खाने वाला उस सभ्य ढ़ंग से भोजन करने वाले से अच्छा है जो रूक्ष व सड़ा-गला वा मदिरा-मांसादि अभक्ष्य पदार्थों का सेवन कर रहा है । इसलिये हमें मूल तत्व पर अधिक ध्यान देना चाहिये । कुछ विद्वान् तो अग्निहोत्र के भौतिक लाभ की बात उपेक्षित करके अदृष्ट लाभ की ही आशा में रहते हैं इसलिये वे पद्धति को प्रधानता देते हैं भले ही पर्यावरण आदि की हानि हो ।

आर्ष पद्धति के वर्तमान प्रचारक, आचार्य शोधकर्त्ताओं के विषय में निम्न विचार सामने आता है -

वे महानुभाव वैदिक वा आर्ष पदों का अर्थ व्याकरण, निरूक्त वा अन्य ग्रन्थों के आधार पर जब करते हैं तब अपनी ऊहा, तर्क आदि का आश्रय लेते ही नहीं । तर्क व ऊहा को महान् वेददृष्टा भगवान् यास्क ने अति महत्वपूर्ण माना है परन्तु वह इनके पास होता नहीं । हम 'गो' शब्द का अर्थ पृथिवी, आदित्य, रश्मि, वाक्, गाय आदि करते हैं वा पढ़ते हैं । यदि कोई अंग्रज 'गो' शब्द का अर्थ जानने की इच्छा करे तो हम उसके पर्यायवाची उपर्युक्त शब्दों का अंग्रेजी अनुवाद कर देते हैं अर्थात् एक शब्द का अर्थ दूसरा 'शब्द' । उस शब्द (वाचक) से जिस पदार्थ विशेष (वाच्य) का ज्ञान होवे वा नहीं, हम शब्द के अन्दर शब्द खोजते चले जाते हैं । यद्‌यपि वाग्व्यवहार वाचकों तक ही सीमित रह सकता है परन्तु जब तक वाचक के वाच्य पदार्थ का हमें ज्ञान नहीं होवे, तब तक वाचकों की कथा से क्या मिलेगा ? यद्‌यपि वाचक के बिना वाच्य के स्वरूप को समझना, समझाना दुष्कर है परन्तु केवल यह वाग्‌विलास का ही विषय बन जाये तो उससे कुछ लाभ होने

वाला नहीं है । इसीलिये 'गो' शब्द पर विचार करने वाले को गाय, आदित्य, किरण, पृथिवी, वाक् आदि का विज्ञान न हो तब तक 'गो' शब्द पर सब कुछ लिखना, बोलना, सुनना, सुनाना, शोध करना सब आकाशीय पुष्पवत् मिथ्या ही माना जा सकता है और मिथ्या नहीं मानें तो निरर्थक माना जायेगा ।

वैदिक आख्यानों पर हम आलंकारिक समीक्षा करके किसी विज्ञान को जानने का यत्न करते हैं । जैसे इन्द्र और वृत्र के युद्ध को अनित्य इतिहास से पृथक् देखते हुये 'इन्द्र' का अर्थ विद्युत् तथा 'वृत्र' का अर्थ मेघ पढ़ते व सुनते हैं परन्तु विद्युत् रूपी इन्द्र मेघ रूपी वृत्र को कैसे मारता है, इसका हमें ज्ञान नहीं है । अग्नि शब्द का निर्वचन हम निरूक्त के आधार पर करते हैं परन्तु हम नहीं जानते कि अग्नि को अग्रणी क्यों कहा ? यज्ञ का अर्थ क्या है जिसमें सर्वप्रथम अग्नि को लाया जाता है । हमारे सम्मुख अग्निहोत्र ही यज्ञ के रूप में दिखाई देता है और भौतिक आग ही अग्नि के रूप में हमें स्मृत होता है आचार्य यास्क के पृथिवी, पर्जन्य, अग्नि के संभोग व स्थान की एकता का रहस्य, देवो भक्ति साहचर्य का रहस्य क्या है ? इनमें कौनसा गूढ़ विज्ञान है, इसे केवल शब्द शास्त्र से नहीं जाना जा सकता । हां, शब्द शास्त्र इसमें सहायक अवश्य होगा परन्तु जब तक अन्य शास्त्रों तथा आधुनिक विज्ञान का चिन्तन व प्रबल ऊहा, तर्क शक्ति नहीं होगी तब तक इन रहस्यों का भेद समझ में नहीं आयेगा ।

वेद में देवता का ज्ञान अति महत्वपूर्ण है इसी कारण आचार्य यास्क ने देवता ज्ञान में अति सावधानी बरतने को कहा है । फिर मान लिया हमने देवता का ज्ञान कर भी लिया, फिर इतना भी पर्याप्त नहीं है । मान लें किसी मन्त्र का देवता अग्नि है और अग्नि पद यौगिक है । इसके अनेक अर्थ सम्भव हैं यथा परमात्मा, जीवात्मा, राजा, विद्वान्, सेनापति, आग, विद्युत् आदि अनेक प्रकार के ऊर्जाओं का रूप । जड़ चेतन का भेद तो उस मन्त्र के अन्य पदों से विदित हो जायेगा परन्तु जड़ परक अर्थ करते समय आग, विद्युतादि ऊर्ज़ा में से क्या ग्रहण करें, यह अत्यन्त उच्च चिन्तन से ही समझ में आ सकता है ।

इसी प्रकार प्रकरणज्ञान जिसके बिना वेदार्थ सम्भव ही नहीं है, भी कोई साधारण बात नहीं है । प्रकरण जानने हेतु मन्त्र के आगे व पीछे के मन्त्रों का अर्थ जानना आवश्यक है फिर उन आगे-पीछे वाले मन्त्रों का प्रकरण जानने हेतु उनके आगे व पीछे वाले मन्त्रों

का अर्थ भी जानना होगा । तब यह श्रृंखला कहां रूकेगी? यह विशेष विचार की बात है। वेदों के प्रथम व अन्तिम मन्त्रों के प्रकरण का ज्ञान करना और भी दुष्कर है । निश्चित ही इसमें सूक्ष्म चिन्तन शक्ति व प्रबल ऊहा व तर्क का भी आश्रय लेना होगा। योगाभ्यास भी इसमें सहायक होगा । निर्मल व शान्त मन का भी होना आवश्यक है । इस प्रकार प्रकरण का ज्ञान सर्वाधिक दुष्कर कार्य है । तब वेदार्थ यथा-तथा करने का प्रयास यथार्थता से दूर ही होगा ।

ब्रह्मसूत्रों में से एक सूत्र 'तत्तु समन्वयात्' पर विचार पूर्व में कर चुके हैं । कोई-कोई मानते हैं कि हमारा दर्शन सृष्टि विज्ञान को अपने ढ़ंग से समझता है और आधुनिक विज्ञान अलग ढ़ंग से, इससे विचलित क्यों होना ? मैं विनम्रतापूर्वक पूछता हूँ कि सृष्टि सबके लिये एक ही है फिर उसका विज्ञान पृथक–पृथक क्यों ? जिस प्रकार से एक ईश्वर का प्रतिपादन करते हुये हम मत–पंथों का विलय कर एक सत्य सनातन वैदिक धर्म की स्थापना की इच्छा करते हैं, उसी प्रकार वैदिक दर्शन तथा वर्तमान विज्ञान का सामंजस्य करके सत्यासत्य विवेक के आधार पर एक सत्य विज्ञान को प्राप्त करके एकता का प्रयत्न क्यों नहीं करते ? जब इस सूत्र के विषय में ही यह स्थिति हमारी है तब सम्पूर्ण वैदिक वाड्मय के विषय में कहना ही क्या ? फिर भी हम अन्धश्रद्धा वेद को ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं । जब कि हम ऐसा सिद्ध करने में एकमात्र सहायक इस ब्रह्मसूत्र का साक्षात् ज्ञान कर नहीं पाये । यद्यपि आप्त प्रमाण स्वयं मैं बहुत महत्वपूर्ण होता है परन्तु आप्त प्रमाणों की आप्तता स्वयं संकट में पड़ी हो तब आप्त प्रमाण की प्रामाणिकता को विश्व स्वीकार नहीं कर सकता । इस कारण इस सूत्र पर क़ाम करने हेतु वैदिक विज्ञान तथा सृष्टि विज्ञान जिसमें न्यूक्लियर, एटामिक, पार्टिक्ल, एस्ट्रो फिजिक्स, कॉस्मोलॉजी, बायोलॉजी व कैमेस्ट्री सबका समावेश होगा, का अध्ययन करना ही होगा । मेरा लक्ष्य इसी सूत्र की स्थापना विश्व विज्ञान जगत् में करके वेद को अपौरूषेय व सर्वज्ञानमय सिद्ध करना है ।

मैं पहिले यह सोचता था कि आचार्य सायण को वेदार्थ प्रक्रिया का बोध नहीं था इस कारण उसने व्याकरण के आधार ही वेद भाष्य करके कर्मकाण्ड को ही प्रायः लक्ष्य किया और सत्यार्थ का बोध नहीं कर सके । जब मैं उनका ऋग्वेद व अथर्ववेद भाष्य मंगा

कर पढ़ा तो मेरी धारणा निर्मूल हो गयी । मैंने पाया कि वेद भाष्य करते समय आचाय सायण ने ऋषि दयानन्द सरस्वती से भी अधिक आर्ष प्रमाण उद्धृत किये हैं । उदाहरणार्थ ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के प्रथम सूक्त के प्रथम मन्त्र के भाष्य को देखें । जहां सायण ने इसमें ५१ प्रमाणों को उद्धृत किया है जबकि ऋषि दयानन्दजी ने मात्र १६ प्रमाणों को। तब यह कहना कि सायण वेदार्थ प्रक्रिया से परिचित नहीं था, उचित नहीं। विचारणीय यह है कि ऐसा होते हुये भी सायण वेदार्थ का यथार्थ क्यों नहीं समझे ? मेरे विचार में आचार्य सायण ने आर्ष प्रमाणों का प्रचुर प्रयोग मात्र पदों के निर्वचन, व्युत्पत्ति तथा स्वर आदि को दर्शाने हेतु ही किया है। कई प्रमाण अनावश्यक ही दिये हैं। उन प्रमाणों को क्यों उद्धृत किया जा रहा है, उन प्रमाणों का स्वयं अर्थ वा भाव क्या है, यह सायण या तो जानते नहीं अथवा उपेक्षित किया है । उदाहरणार्थ ऐ. ब्रा. का प्रमाण दिया है - "अग्निर्वै देवानां होता" अर्थात् अग्नि देवों का होता है । इससे सायण क्या दर्शाना चाहते हैं, यह स्पष्ट नहीं है 'अग्निमीडे पुरोहितम्.......' मन्त्र में अग्नि को होता कहा ही है फिर इसकी पुष्टि में उपर्युक्त प्रमाण की आवश्यकता क्या है ? यदि सायण इस प्रश्न कि अग्नि किसका होता है ? का उत्तर देते हुये बताना चाहते थे कि अग्नि देवो का होता है । तब इस विषय में सायण ने यह विचारा ही नहीं कि होता व देव शब्द का अर्थ क्या है ? इस सृष्टि में कौन से पदार्थ देव हैं, जिनका होता यह अग्नि है । इन प्रश्नों को सुलझाये बिना प्रमाण देकर कलेवर बढ़ाने का औचित्य क्या है ? निरूक्त के निर्वचन 'अग्रणीर्भवति अग्निः' का मन्त्र के भाष्य में कोई उपयोग नहीं लिया गया है । कोई स्वर उदात्तादि किस सूत्र से हुआ, यह दर्शाते हुये भी स्वर का अर्थ में उपयोग नहीं लिया, फिर स्वर के ज्ञान का लाभ क्या हुआ ? इसी प्रकार अन्यत्र भी जानना ।

आचार्य सायण अग्नि का अर्थ भी यह भौतिक आग जिससे संसार के प्राणी परिचित हैं, ही करके यज्ञ को अग्निहोत्र का ही पर्यायवाची मानते हैं । इससे आगे सायण की सोच है ही नहीं। पाण्डित्य प्रदर्शन मुख्य लक्ष्य प्रतीत होता है । मेरे विचार में पण्डित वही है जो पदों के अर्थों को व्यवहारिक धरातल तक समझने व उससे उपकार करने व कराने की क्षमता रखता है । केवल शब्द जाल बुनना ही पाण्डित्य नहीं है । यह सत्य है कि पदों की व्युत्पत्ति वा निर्वचन वेदार्थ का मूल आधार है परन्तु उस अर्थ का लोक में

क्या-क्या विस्तार है, यह जाने बिना वेद विज्ञान प्रकाशित नहीं हो सकता। यही कारण है कि वेदार्थ चिकीर्षु विद्वान् यथार्थता से दूर खड़े हैं। 'गो' शब्द की मनोहारी व्याख्या करने वाले गो नामक पशु विशेष को जानते ही नहीं तब उसका दुग्ध, घृत कहाँ से प्राप्त कर सकते हैं।

अब ऋषि दयानन्द सरस्वती के इसी मन्त्र के भाष्य पर विचार करें तो पायेंगे कि उनके मस्तिष्क में एक महानुं चिन्तन है, बुद्धि में विषय विश्लेषण की अद्भुत क्षमता तथा तीक्ष्ण ऊहा व तर्क का समावेश है फिर हो भी क्यों नहीं ऋषि वीतराग निर्मल चित योगी हैं। सकल शास्त्रों का अध्ययन तो है ही। अग्नि देवता वाली ऋचा का अर्थ करते हुये वे सर्वप्रथम मन्त्र के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पद 'अग्नि' शब्द पर ही विचार करते हैं। लोक में अग्नि पद से भौतिक आग का ही प्रायः ग्रहण होता है इस कारण अग्नि से किस-किस का ग्रहण होगा इसके लिये वेद व ब्राह्मण ग्रन्थों के प्रमाण प्रारम्भ में ही देते हैं। जो सायण 'आग' इस सर्वविदित पदार्थ से बाहर भी अग्नि पद का वाच्य कोई पदार्थ हो सकता है, यह सोच भी नहीं पाये, वही दयानन्द ने प्रमाणों के आधार पर परमेश्वर तथा भौतिक अग्नि दोनों का ग्रहण इस मन्त्र में किया। जब अग्नि पद का अर्थ परमात्मा किया तो 'ईडे' पद का अर्थ 'स्तुति करते हैं', ऐसा किया और जब अग्नि पद का अर्थ भौतिक अग्नि किया तब 'ईडे' पद का अर्थ "खोजते हैं"। " वे चाहते हैं ", किया है। भौतिक अग्नि के ग्रहण के समय उनके मन में केवल इस सर्वविदित आग का ही संकेत नहीं है जो अग्निहोत्रादि में काम आता है अपितु विमान आदि यानों, अनेक मन्त्रों आदि में काम आने वाली ऊर्जा का भी ग्रहण वे भौतिक अग्नि से करते हैं। विद्युत् भी उनकी अग्नि का एक नाम है। पाठक विचारें कि अग्नि पद के अर्थ करने में ऋषि का चिन्तन कितना व्यापक है ? 'यज्ञ' शब्द से सायण केवल अग्निहोत्र प्रक्रिया का ही ग्रहण करना जानते हैं। जब कि ऋषि विद्वानों का सत्कार, संगम, महिमा, कर्म, शिल्प विद्या (इन्जीनियरिंग व टैक्नोलॉजी) आदि का भी ग्रहण करते हैं तभी अग्नि पद के उपर्युक्त अर्थों की संगति लग सकेगी। भौतिक अग्नि के गुण लिखे "रूपदाहप्रकाशवेग छेदनादि युक्तः" पुरोहित जो अग्नि का विशेषण ही है के अर्थ में ऋषि ने लिखा है- 'पुरस्तात् सर्वं जगद्दधाति छेदन धारणआकर्षणादि गुण युक्तः" यहां आदि से प्रतिकर्षण बल का भी ग्रहण युक्त है। अर्थात् प्रकाश, वेग, छेदन, धारण, आकर्षण, प्रतिकर्षण, रूप, दाह ये आठ गुण भौतिक अग्नि के बताये हैं। आध्यात्मिक अर्थ के समय परमेश्वर के अनेक गुणों का वर्णन

भी अग्नि अर्थ में ऋषि ने किया है । इस प्रकार ऋषि ने आध्यात्मिकता व भौतिक दोनों अर्थों में व्यापकता से अग्नि, पुरोहित, देव, होतादि पदों को व्याख्यात किया वहीं सायण प्रमाणों के संकलन में वेद का यथार्थ भूल बैठे और अग्नि का केवल भौतिक अर्थ और उसमें भी केवल आग का ही ग्रहण कर अपनी अज्ञानता प्रदर्शित कर बैठे । यही ऋषि का सायणादि अन्य भाष्यकारों से वैशिष्ट्य है, जिसके लिये ही सकल शास्त्राध्येता होने के साथ तपस्वी, वीतराग, योगी, महत्ती प्रज्ञा का धनी, महान् तार्किक और वैज्ञानिक चिन्तन का धनी होना अनिवार्य है ।

अब प्रश्न यह है कि ऋषि दयानन्द के अनुयायी विद्वान् भी क्यों वेद से कोई वैज्ञानिक देन संसार को अब तक नहीं दे सके ? उसके उत्तर में मेरा विनम्र निवेदन है कि जिस प्रकार सकल शास्त्राध्येता सायण वैज्ञानिक बुद्धि सम्पन्न व योगयुक्त आत्मा न होने के कारण वेदार्थ तथा आर्ष प्रमाणों के तत्व को नहीं जान सका, प्रमाणों की संख्या बढ़ाता रहा । चिन्तन एक भी प्रमाण करने की योग्यता नहीं पा सका । शब्दजाल ही बुनता रहा उसी प्रकार ऋषि भक्त विद्वान् ऋषि के भाष्य के मूल तत्व को नहीं समझ पाये। फिर आर्ष प्रमाणों को समझना तो और भी दुष्कर है। प्रमाण रटे जा रहे हैं। शब्द के अर्थ में शब्द खोजे जा रहे हैं परन्तु वाच्य पदार्थ पर चिन्तन करने की क्षमता ही नहीं है और न प्रयत्न ही । महर्षि जी महाराज ने वेदार्थ भी अति संक्षेप में सूत्र रूप जैसा किया है, यह प्रतीत होता है । उन्हें क्यों शीघ्रता थी ? इस पर विचार अपेक्षित है। प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् स्व. पं. आचार्य विश्वश्रवा जी व्यास ने अपने ऋग्वेद महाभाष्यम् में ऋषि दयानन्दजी की चतुर्वेद विषय सूची के मुख पृष्ठ पर लिखे एक श्लोक को उद्धृत् किया है जिसका भाव है कि ऋषि विस्तृत वेद भाष्य करने हेतु चारों वेदों के लिये कुल चार सौ वर्ष का काल अपेक्षित मानते हैं । उन्होंने प्रारम्भ में वेदभाष्य के नमूने प्रकाशित किये थे जो कुछ विस्तृत थे परन्तु धीरे-धीरे भाष्य संक्षिप्त होता गया । ऋग्वेद को बीच में छोड़ यजुर्वेद किया । प्रतीत होता है कि उन्हें अपनी मृत्यु का पूर्वाभास हो गया था, इसी कारण शीघ्रता की । आज सूत्र रूप में उनका भाष्य हमारे लिये कठिन प्रतीत होता है वा कहीं-कहीं अधूरा प्रतीत होता है । इस पर विद्वानों को गम्भीरता से विचार करना चाहिये। ऋषि ने वेदार्थ की कुंजी प्रदान की है । याज्ञवल्क्य, यास्क आदि की परम्परा का निर्वहन करते हुये भी ऋषि ने यास्क से हटकर भी अर्थ अनेकत्र किया है । परन्तु वे अपना आदर्श यास्क ऋषि को अवश्य मानते हैं, उसी प्रकार हमें ऋषि शैली को समझकर याज्ञवल्क्य, यास्क तथा

सामाजिक सुधार भी एक लक्ष्य होता है । विज्ञानोन्मुखी व्यक्ति विज्ञान को ही लक्ष्य करता है तो आध्यात्मिक पुरूष परमात्म तत्व का चिन्तन विशेषतया करता है । इसका उनके भाष्य पर प्रभाव कुछ न कुछ मात्रा में होता ही है । फिर वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक होने से अनेक विज्ञानों का प्रकाश सम्भव है ही । हमारी रूचि व गति किस क्षेत्र में है, उसे हम प्रधानता देते हैं ।

हर क्षेत्र में हर वेद भाष्यकार चिन्तन कर ले, यह सम्भव नहीं लगता है। फिर विचारें कि जिन ऋषि ने अपना वेद भाष्य कुछ वर्षों में ही किया । यदि उनकी इच्छानुसार चार सौ वर्ष केवल वेदभाष्य में ही लगा देने की आयु होती तब उनका वेद भाष्य कैसा व्यापक होता ? वैदिक पदों से कितने अर्थों का ग्रहण होता ? कितने विज्ञानों का प्रकाशन होता, यह हम विचार ही कर सकते हैं। अब ऋषि रहे नहीं तब हमको यह प्रयास करना चाहिये परन्तु मनगढ़न्त कल्पनाओं से बचना चाहिये। बहुत कुछ विस्तार तो ऋषि भाष्य का ही करके अनेक विद्याओं का प्रकाशन सम्भव है । जैसे- ऋषि ने भौतिकाग्नि के आठ गुण रूप, दाह, वेग, प्रकाश, छेदन, धारण, आकर्षण, प्रतिकर्षण बताये हैं। अब इन गुणों का वैज्ञानिक अध्ययन करके अनेक प्रकार की ऊर्जाओं का ज्ञान करना उससे सृष्टि में उपकार करना, सृष्टि रूपी यज्ञ को समझना हमें अपेक्षित है । आधुनिक विज्ञान इन गुणों तथा उसके गुणी भौतिकाग्नि की विस्तृत व्याख्या करता है । हमें उसका लाभ लेना चाहिये । आधुनिक विज्ञान से पलायन कर, उसकी उपेक्षा वा निन्दा करके कोई भी वेदार्थ या वैज्ञानिक तत्व जानने में समर्थ नहीं हो सकता । प्राचीन ऋषि महर्षियों ने विज्ञान पर अनेक ग्रन्थ लिखे होंगे, उनका इस समय लोप हो गया है, तब भौतिक विद्याओं को जानने का एक मात्र साधन आधुनिक विज्ञान ही है । भले ही वह सर्वांश में प्रामाणिक नहीं होने से परिवर्तित होता रहता है परन्तु जितना-जितना अंश हम सिद्ध मानकर उपयोग में ले रहे हैं, उसका ज्ञान तो हमें होना ही चाहिये अन्यथा अपने कल्पित विज्ञान में फंसकर रह जायेंगे । आधुनिक विज्ञान के आविष्कारों को उपयोग में लाते हुये भी उसकी निन्दा व वैदिक विज्ञान की स्तुति करके उपहास के पात्र बनेंगे । परन्तु ऋषि भाष्यों की व्याख्या वा उसी शैली पर उन्हीं की भावना के अनुकूल अन्य अर्थ करते समय अत्यन्त चिन्तन मनन की आवश्यकता है ।

मुझे तो अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये केवल भौतिक अर्थों पर ही विचार करना होगा, अन्य विषय सर्वथा दूर रखने होंगे । मैं भौतिक विज्ञान की चकाचौंध में फंसे मानव को भौतिक विज्ञान के चकाचौंध से ही अपना मित्र बनाना चाहता हूँ । जिस दिन यह सम्भव होगा उस दिन भौतिकता की चकाचौंध में पागल विलासी जीव मानव समस्त भौतिक विद्याओं के मूल सोत वेद की अन्य विद्याओं यथा - अध्यात्म, राजनीति, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि को भी श्रद्धा की दृष्टि से देखेगा जिससे उनका जीवन परिवर्तित होकर सत्य धर्ममय होगा । आधुनिक विज्ञान व अध्यात्म का समन्वय होगा । विश्व भोगवाद के स्थान पर त्यागवाद की ओर प्रवृत्त होगा । सम्प्रदायों का लोप होकर एक सत्य वेद धर्म का भूमण्डल में उदय होकर विश्व में शान्ति का साम्राज्य होगा ।

मैं इसी प्रक्रिया का अनुयायी हूँ । अभी कुछ पढ़ा ही नहीं परन्तु ईश्वर कृपा से विश्वास है कि मैं इसी प्रक्रिया का सिंहावलोकन न कर पाया तो विहंगावलोकन करके ही पदों के अर्थ की गहराईयों में जाकर आधुनिक विज्ञान की व्याख्याओं को समझकर वैदिक पदों को आधुनिक विज्ञान की भाषा में प्रस्तुति करके उनसे प्रयोगात्मक कुछ करणीय कर पाऊंगा अथवा इस वैदिक ज्ञान से आधुनिक विज्ञान के अनसुलझे रहस्यों को सुलझाकर वर्तमान वैज्ञानिकों में वेद की सर्वज्ञानमयता वा अपौरूषेयता सिद्ध कर दूंगा । दुःख है कि न तो वैदिक वाङ्मय का विधिवत् अध्ययन कर अवसर मिला और न आधुनिक विज्ञान का पुनरपि दोनों ही विशाल क्षेत्रों में शिखर का काम करना चाहता हूँ एवं एतदर्थ भीषण प्रतिज्ञाबद्ध भी हूँ । इस पर कई विद्वान् व्यंग्य व उपहास भी करते हैं तो अनेकों परिचित विद्वान् तथा वर्तमान वैज्ञानिक प्रोत्साहन देते हैं व आशा करते हैं कि ऐसा अवश्य होगा । हां, यह बात अत्यन्त दुःख की है कि कुछ शीर्ष विद्वान्, प्रतिनिधि सभायें, वैदिक संस्थान मेरे इस कार्य की उपेक्षा करते हैं । जबकि वर्तमान विज्ञान में सर्वथा अपरिचित वैज्ञानिक प्रथम चर्चा में ही आत्मीय बन जाते हैं । यह बड़ी विचित्र बात है । जिनके विचारों को विश्व में प्रतिष्ठापित करने का व्रत लेकर शरीर को ही समर्पित कर दिया, वे उपेक्षा, रखें और जिनकी मान्यताओं का प्रबलता से खण्डन करता हूँ वे मैत्री व आत्मीयता भाव रखें, यह कैसा दुःखद आश्चर्य है । कई तो व्याकरणशास्त्र पढ़ते-पढ़ते ही अहंभाव की मुद्रा में दिखाई देते हैं । उन भोले बन्धुओं को

दयानन्द के पद चिन्हों पर चलकर अलग अर्थ भी करने का प्रयत्न कर सकते हैं । मेरा मानना है कि कोई भी वेद भाष्यकर देश, काल, समाज की समस्याओं को परिप्रेक्ष्य में भी सदैव सोचता ही है । समाज के क्रान्तिकारी सुधारक महापुरूषों के सम्मुख विचार ही नहीं आता कि शब्द शास्त्र तो टार्च के सम्मान है, साधन है, साध्य तो वेद का विज्ञान है । यदि इस महान् विज्ञान को न जाना जा सका तो टार्च लेकर फिरने से कोई अर्थ निकलने वाला नहीं है । मैं जानता हूँ कि मेरे इन आलोचक वैयाकरणों, दार्षनिकों नैरूक्त बन्धुओं ने शब्दजाल बुनने को ही चरम लक्ष्य समझ लिया है । इन विषयों के वास्तविक तत्व को आज नहीं समझा जा रहा है । व्याख्यान व लेखन ही प्रयोजन है । उससे किसी विद्या का बोध हो अथवा न हो, उन्हें इससे कोई प्रयोजन नहीं । वैज्ञानिकों की विद्या के सहारे सर्वविलासमय जीवन जीना और उनकी ही तीव्र आलोचना करके अपने को सर्व विद्या युक्त बताना यह हमारा दम्भ व दुर्भाग्य ही रह गया है। ईश्वर सबको विचारवान् बनाये ।

मैं तो उस दिन देखने को तरस रहा हूँ कि जब अमरीका, जर्मनी, जापान, फ्रांस, ब्रिटेन, कनाडा आदि विकसित देशों के वैज्ञानिक वेद के विद्वानों से जानने की इच्छा करेंगे कि वेद क्या कहता है ? ऋषियों की अमुक विषय में क्या मान्यता है ? यही मेरे जीवन का मुख्य ध्येय है । सभी से आशा करता हूं कि हृदय की गहराईयों तथा मानसिक चिन्तन की ऊँचाईयों में जाकर मेरे इस लेख, उद्देश्य व कार्य पर विचार करके यथा योग्य सहयोग करें । यह विश्व मानवता का कार्य है। इससे बड़ा कोई कार्य इस भूतल पर नहीं है । न इससे बड़ी कोई देशभक्ति है ।

॥ ओ३म् ॥

-: निवेदन एवं स्पष्टीकरण :-

मेरे संकल्प के विषय में मेरे आत्मीय, श्रद्धेय व स्नेहीजनों के कुछ पत्र आये। कुछ से साक्षात् चर्चा भी हुयी । वैदिक विद्वानों तथा मित्र वैज्ञानिकों सबने इस संकल्प की प्रशंसा करते हुए भी आत्मीयताजन्या आपत्ति भी व्यक्त की । विक्रम संवत् २०७७ (सन् २०२१) महाशिवरात्रि तक का समय इस कार्य के लिए अत्यन्त कम है, ऐसा सबका मानना है । फिर लक्ष्य सिद्ध न कर सकने की स्थिति में शरीर त्याग की प्रतिज्ञा पर सभी आपत्ति कर रहे हैं अपवादों को छोड़कर। कई सज्जन इसे वेद विरूद्ध बता रहे हैं कोई चिन्ता व्यक्त करते हुये कह रहे हैं कि साधन नहीं मिले तब कैसे होगा? अन्य भी अनेक तर्क दे रहे हैं । मैं उन महानुभावों की आत्मीयता हेतु आभार व्यक्त करते हुए विनम्रता से प्रार्थना करता हूँ कि यह मेरे लिए घातक हो सकता है परन्तु मैं विचारता हूँ कि प्रतिज्ञा करते समय सबसे बड़ा विश्वास तो परमात्मा का ही था जो आज भी है। आर्यजगत् की उपेक्षा व असहयोग की दुःखद स्थिति से तब भी परिचित था और अब भी हूँ । लक्ष्य सिद्धि हेतु अपने सिद्धान्त छोड़कर मैं कहीं जा भी नहीं सकता । एक प्रसिद्ध सन्त द्वारा दिये बहुत उदार प्रस्ताव को विनम्रता पूर्वक ठुकरा चुका हूँ । आर्ष सिद्धान्तों का परित्याग करने से पूर्व मरना स्वीकार करूंगा । मैं यश, धन व प्रतिष्ठा की चाह अथवा मृत्यु से बचने हेतु लक्ष्य सिद्धि के लिए भी आर्ष सिद्धान्तों का त्याग नहीं कर सकता । मैं साधन, साथी आदि के अभाव में रहते हुए भी अपने व्रत से पीछे नहीं हट सकता क्योंकि प्रतिज्ञा पालन अर्थात् सत्य का व्रत मैंने इस संकल्प से वर्षों पूर्व लिया था । इसी कारण शरीर का मोह त्याग कर इस कार्य में यथा शक्ति लगा रहूँगा । यदि आर्यों का सहयोग पर्याप्त न मिला तो भी संकल्प अवधि समाप्ति पर मुझे यह सन्तोष तो होगा ही कि जीवन भर जूझा, अनेक शारीरिक व मानसिक कष्टों को सहा लेकिन कहीं असत्य से समझौता नहीं किया । यद्यपि आर्य समाज तथा वैदिक विचारधारा पर आज सुनियोजित ढ़ंग से आक्रमण

हो रहा है, सत्यार्थ प्रकाश के प्रति क्या-क्या दुर्व्यवहार अपने व पराये लोग कर रहे हैं। वेद पर भी कटु प्रहारविधर्मी तो क्या आर्य कहाने वाले भी कर रहे हैं । पौराणिक भाई तो कथा-कहानियों व कर्मकाण्डों में ही व्यस्त हैं । मेरे पास घोर आपत्तिजनक लेख आ रहे हैं । कोई भावुक व पवित्र हृदय सज्जन मुझे ऐसे आक्रमणों का उत्तर देने के लिए आत्मीयता पूर्ण आग्रह भी कर रहे हैं और मैं भी हृदय को जलता हुआ जानकर भी अपने लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए मौन बैठा हूँ । जो लेखनी हर आक्रमण का उत्तर देने में तत्पर रहती थी वह इस लक्ष्य के कारण शान्त है, यह सोचकर मेरी मनोदशा को परमात्मा तथा कोई सहृदय ही जान सकता है । मैंने निश्चित समय पश्चात् लक्ष्य न पाने से भयभीत होकर लेखनी को बन्द नहीं किया है बल्कि लक्ष्य न पाने की दशा में लोग अनेकविध अनुचित चर्चा करेंगे, कोई दम्भी व अहंकारी कहेगा, तो किन्हीं वेद शोधकर्त्ताओं का साहस टूटेगा, वेद विरोधी उपहास करेंगे, इसी भय से तथा लक्ष्य को वर्तमान परिस्थिति मे सबसे महान् कार्य मानकर ही इन सब लेखों, गतिविधियों रूपी अपमान के घूंटों को पी रहा हूँ और आशा कर रहा हूँ कि कोई मेरा भाई ऋषि भक्त विद्वान् इस कार्य को अपने हाथ में लेगा और अनेक मान्य विद्वानों की लेखनी आज सक्रिय भी है । आशा है मुझ पर ऐसे आक्रमणों का उत्तर देने का दबाव नहीं डाला जायेगा ।

अब एक प्रश्न मेरे एक हितैषी विद्वन्मित्र ने अभी ३०-०१-०७ को अजमेर में प्रस्तुत किया। उनका भाव यह था कि वैज्ञानिकों के समक्ष वेद की अपोरूषेयता सिद्ध करने की कसौटी क्या होगी ? यदि वेद तथा सृष्टि में समन्वय तत्तु समन्वयात्' (१/१/४ ब्रह्मसूत्र) के सन्दर्भ में कर भी दिया गया जिसके आधार पर भगवान् व्यासजी महाराज ने वेद को अपौरूषेय कहा, तब भी वैज्ञानिक इस कसौटी को न मानकर सिर्फ इतना ही स्वीकारें कि वेद एक वैज्ञानिक ग्रन्थ है तथा वेद वैज्ञानिक ऋषियों की रचना है, इसे ईश्वरीय नहीं माना जा सकता तब क्या होगा ? वैज्ञानिक औपचारिक रूप से तो ईश्वर की भी सत्ता को नहीं मानते भले ही अनौपचारिक चर्चा में करें, विश्व के

ख्यातिर्लब्ध वैज्ञानिक ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करते रहे हैं परन्तु ईश्वर को कभी अपने विषय में सम्मिलित नहीं करते तब वेद को ईश्वरीय कैसे मानेंगे ? उनका यह प्रश्न अवश्य ही चिन्त्य है । मैं यह भी विचारता हूँ कि जब मुंशीराम नामक एक पाश्चात्य सभ्यता के प्रवाह में बह रहा युवक जो बाद में स्वामी श्रद्धानन्द के नाम से विख्यात हुआ, ऋषि दयानन्दजी के सम्मुख अपने को निरूत्तर पाकर भी ईश्वर की सत्ता को स्वीकार नहीं कर सका तब ऋषि ने कहा था कि उसी ईश्वर की कृपा होगी तभी उसकी सत्ता पर विश्वास होगा । यही स्थिति मेरे सम्मुख भी आयेगी या आ सकती है । तब मुझे क्या करना होगा ? इसका उत्तर मैं समस्त वेद भक्त जगत् के समक्ष अभी से ही दे रहा हूँ ताकि उस समय मुझे कोई मिथ्यावादी न कहे अथवा मैं किसी अन्याय, छल आदि का शिकार न हो जाऊं । मेरा स्पष्ट मत है कि मैं यह दावा नहीं कर सकता कि मैं वैज्ञानिकों से लिखित में वेद की ईश्वरीयता मनवा लूंगा । मेरी लक्ष्य सिद्धि की कसौटी इस प्रकार होगी-

आधुनिक वैज्ञानिकों के सृष्टि विज्ञान (पार्टिकल-स्टमिक-न्यूक्लियर-खगोल-भौतिकी आदि अनेकों सम्बन्धित विषय) में अनेक न्यूनताओं को उनके समक्ष उजागर करूंगा जिनका उत्तर वे नहीं दे सकें फिर मैं अपना सृष्टि विज्ञान जिसमें उपर्युक्त सभी विषय सम्मिलित होंगे प्रस्तुत करूंगा । मैं वैज्ञानिकों को प्रश्न करने को कहूंगा। उनके प्रश्नों का उत्तर दूंगा । यदि वे फिर प्रश्न न कर सकें तो मैं अपने लक्ष्य में सफल स्वयं ही समझूंगा । हां, इस प्रश्नोत्तर की साक्षी मेरे पास होनी चाहिये । यदि उस समय का सृष्टि विज्ञान मुझे सन्तुष्ट कर देगा तथा वैदिक सृष्टि विज्ञान भी तदनुकूल ही मैंने पाया तब भी लक्ष्य सिद्ध माना जायेगा परन्तु यदि मैं उनके सृष्टि विज्ञान पर अकाट्य प्रश्न न रख सका और वे हमारे वैदिक सृष्टि विज्ञान पर अकाट्य प्रश्न रख सके अर्थात् मैं निरूत्तर हो गया और मेरा काल पूर्ण भी हो गया तो मैं अपने लक्ष्य में असफल होकर न्यास का प्रमुख व आचार्य पद अवश्यमेव त्याग दूंगा फिर उस समय जैसा बुद्धि व आत्मा को योग्य प्रतीत होगा, वैसा

करूंगा । इसमें किसी की कोई अन्यथा विचारने की आवश्यकता नहीं है । जो वैज्ञानिक व्यक्तिगत चर्चा में ईश्वर को स्वीकारें परन्तु अपने ग्रन्थों में उसे कोई स्थान न दें तो उन्हें मेरा निवेदन इस प्रकार होगा - "यदि ईश्वर की सत्ता को नहीं मानते हैं तो अपने सृष्टि विज्ञान पर मेरे प्रश्नों का उत्तर दीजिए यदि नहीं देते हैं तो ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करिये । औपचारिक-अनौपचारिक दो प्रकार की विरोधी बातें आपको शोभनीय नहीं है । यह सत्य है कि आप ईश्वर की चर्चा को अपने विज्ञान का अंश नहीं मान सकते क्योंकि ईश्वर प्रयोगशाला में सिद्ध होने योग्य पदार्थ नहीं है । मैं आपको पूछता हूँ कि कोई गणितज्ञ जीव विज्ञान को अपने विषय में समाविष्ट नहीं कर सकता क्योंकि यह उसका विषय नहीं है । परन्तु क्या वह जीव विज्ञान की सत्ता का निषेध कर सकता है ? यदि नहीं तब ईश्वर को आप अपने पदार्थ विज्ञान का विषय न मान सकें तब भी क्या आप ईश्वर की सत्ता को औपचारिक रूप से अस्वीकार करने के अधिकारी हो गये ?"

अब तक का तुच्छ अनुभव बताता है कि वैज्ञानिक खुले हृदय व विशाल मस्तिष्क के धनी होते हैं हठी व दुराग्रही नहीं होते वे अवश्य ही सत्य को स्वीकार करेंगे। मैं उनको अपनी प्रतिज्ञा से अवगत कराकर उनकी दया, सहानुभूति की इच्छा करके वास्तविकता को प्रभावित करने का प्रयास भी नहीं करूंगा। आपको यह भी निवेदन कर दूं कि अभी तक किसी उच्च स्तर के वैज्ञानिक को मैंने अपने संकल्प से अवगत नहीं कराया है ।

इत्यलमनयावार्तया

कुछ सम्मत्तियाँ

"मैं आशा करता हूँ कि अध्यवसायी वैज्ञानिक स्वामी अग्निव्रतजी की इस पुस्तक को आदर की दृष्टि से देखेंगे। अत्यन्त....श्रद्धा...आश्चर्य का विषय है....मैं व्यक्तिगत रूप से इस पुस्तक के अध्ययन से लाभान्वित हुआ हूँ और आशा करता हूँ कि दूसरे अध्यवसायी वैज्ञानिक भी मेरी ही भाँति इसे पढ़कर लाभ उठायेंगे ..... ।"

– अन्तर्राष्ट्रिय वैज्ञानिक मान्यवर श्री डॉ. आभासकुमारजी मित्रा
हैड, थ्यौरिटीकल एस्ट्रोफिजिक्स सैक्शन
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, मुम्बई

"स्वामी अग्निव्रतजी की पुस्तक का निश्चित ही स्वागत किया जाना चाहिये। हम विश्वास करते हैं कि जाग्रत समाज के सभी घटक स्वामीजी की इस पुस्तक का भरपूर स्वागत करेंगे।"

– मान्य श्री डॉ. जगदीशजी व्यास
वरिष्ठ वैज्ञानिक
भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, मुम्बई

"स्वामी अग्निव्रतजी नैष्ठिक का यह कार्य अत्यन्त साहसिक है।"

– मान्य श्री डॉ. विजयकुमारजी भल्ला
एडीशनल चीफ इन्जीनियर
न्यूक्लियर पॉवर कार्पोरेशन ऑफ इण्डिया लिमिटेड, मुम्बई

आपने हमारी वैज्ञानिक धारणाओं को हिलाकर रख दिया है। यदि आप वैदिक फिजिक्स पर कोई ग्रन्थ लिखें तो हम उसे अपने विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में रखने का प्रयत्न व इच्छा करेंगे।

– मान्यवर प्रोफेसर जयेशजी देशकर
प्रो. वाइस चांसलर, वीर नर्मद दक्षिण
गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत (गुजरात)

"आपकी पुस्तक व शोधकार्य अतीव सुन्दर व महत्वपूर्ण है । अब यह पुस्तक केवल आपकी ही सम्पत्ति न होकर समस्त आधुनिक वैज्ञानिकों की सम्पत्ति बन गयी है। अब हम वृद्ध हो गये हैं । अतः अब आप ही हमारे भविष्य हो । मैं आपसे मिलने की बहुत इच्छा रखता हूँ क्या करूँ, शरीर कृश हो चला है...।"

– वेदार्थ कल्पद्रुम महाग्रन्थ के यशस्वी प्रणेता पूज्यपाद आचार्य विशुद्धानन्दजी मिश्र

वेद मन्दिर, बदायूँ (उ. प्र.)

"आपका वेद के साथ आधुनिक विज्ञान को लेकर चलना निश्चित ही महान् कार्य है ।"

– वैदिक विद्वान् आचार्य डॉ. रामनाथजी वेदालंकार

पूर्व उप कुलपति, गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

हरिद्वार (उत्तरांचल)

आपका प्रयास अत्यन्त सराहनीय है । आपको हार्दिक बधाई ।

– तपोनिष्ठ पूज्यपाद स्वामी धर्मानन्दजी सरस्वती

आचार्य, गुरूकुल आमसेना, उड़ीसा

"आपका कार्य महान् है । निन्दा व विरोध की चिन्ता न करें । आपको प्रमाण पत्र इतिहास देगा ।"

– प्रसिद्ध ज्योतिष विद्वान् पूज्य आचार्य वेदव्रतजी मीमांसक

– वर्तमान स्वामी ब्रह्मानन्दजी सरस्वती

कामारेड्डी (आन्ध्र प्रदेश)

"आपकी वैदिक शोध योजना की प्रगति ठीक चल रही होगी...कृपया मेरा नाम वेद विज्ञान मन्दिर के सहयोगी सदस्य के रूप में पंजीकृत कर लें ।"

– वैदिक विद्वान् मान्य डॉ. कृष्णलालजी

दिल्ली

"यह जानकर हर्ष हुआ कि श्री अग्निव्रतजी नैष्ठिक ने वैदिक-भौतिक विज्ञान पर शोध करने का उपक्रम कया है । यह अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है । आपमें वेद विज्ञान में अनुसंधान करने की तड़प अदम्य है ।...सभी लोग आपकी प्रगति और उपलब्धि की ओर आशा लगाये बैठे हैं । "

– वैदिक विद्वान् मान्यवर डॉ. महावीर श्री मीमांसक
दिल्ली

"आप महान् कार्य कर रहे है।...आपका संकल्प अवश्य पूर्ण होगा ।"

– वैदिक विद्वान् मान्य डॉ. रघुवीरजी वेदालंकार
दिल्ली

"आपका कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण व चुनौती भरा है....।"

– वैदिक विद्वान् मान्यवर डॉ. भवानीलालजी भारतीय
जोधपुर

आपने ऐसा विषय हाथ में लिया है जिस पर मेरी जानकारी में आर्य समाज के सम्पूर्ण इतिहास में किसी भी विद्वान् ने इतनी गम्भीरता व निष्ठा से कार्य नहीं किया है। यह अद्भुत है...स्तुत्य है....। आपके इस महान् प्रयत्न पर समस्त आर्य वैदिक सनातनी लोगों को गर्व होना चाहिये । आपका उद्देश्य महान् ही नहीं, अभूतपूर्व भी है ।

– वैदिक विद्वान् मान्य डॉ. जयदत्तजी उप्रैती
अल्मोड़ा (उत्तरांचल)

बहुत प्रसन्नता हुई कि आज के भौतिक विज्ञान को वेद से मिलाकर उसमें नवीनता देने वाले आपने पग उठाया है, आपको लाख-लाख बधाईयां देता हूँ ।

– तपोधन पूज्यपाद प्रेमप्रकाशजी वानप्रस्थ
धूरी (पंजाब)

आचार्य (स्वामी) अग्निव्रतजी का यह कार्य अत्यन्त सुन्दर व महत्वपूर्ण है ।.. आप आज आर्य जगत् में नवीन आशा की किरण के रूप में दिखाई दे रहे हैं ।

– वैदिक विद्वान् मान्य डॉ. महावीरजी अग्रवाल
प्रोफेसर, गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार (उत्तरांचल)

"माननीय अग्निव्रतजी नैष्ठिक जैसी अद्वितीय प्रतिभा हमारे सामने है जिन्होंने प्रसिद्ध वैज्ञानिकों को अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा का लोहा मनवाने को बाध्य किया है । यदि आर्यजगत् आर्थिक समस्या का समाधान कर दे तो वे विश्व की वैज्ञानिक मंडली में वेद विज्ञान की संस्थापना कर यह सिद्ध कर दिखायेंगे कि वास्तव में वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है...।"

– पूज्यपाद, आचार्य स्वदेशजी
व्याकरणाचार्य, मथुरा (जुलाई 2005 के तपोभूमि के सम्पादकीय में)

आप बहुत महान् कार्य कर रहे है। । निन्दकों व विरोधियों की चिन्ता न करते हुये अपने लक्ष्य पर बढ़ते रहें । अनेक हितैषी विद्वान् आपके कार्य का महत्व समझते हैं ।

– वैदिक विद्वान् मान्य डॉ. ज्वलन्तकुमारजी शास्त्री
अमेठी

आपके कार्य में प्रत्येक आर्य समाजी को सहयोग करना चाहिये । यह एक ऐसा कार्य है जो 130 वर्षों में न सार्वदेशिक कर सकी और न परोपकारिणी सभा । आप धन्यवाद के पात्र हैं ।

– स्वर्गीय पूज्य स्वामी संकल्पानन्दजी सरस्वती
महाराष्ट्र

अद्यतन विज्ञान की चुनौती को स्वीकार करते हुये आपने वेद विज्ञान के उद्‌घाटनार्थ जो विशेष प्रयत्न प्रारम्भ किया है । इस अभूतपूर्व कार्य के लिये चिरकाल से आर्य जगत् को किसी मनीषी की प्रतीक्षा थी । एतदर्थ आपको हार्दिक बधाई ।

– वैदिक विदुषी मान्या डॉ. सुकामाजी
प्राचार्या, श्रीमद् दयानन्द कन्या गुरूकुल
चोटीपुरा (ज्येतिबा फुले नगर) उ. प्र.

"आपका कार्य वास्तव में अति आवश्यक तथा स्तुत्य है। यह कार्य बहुत पहिले होना चाहिये था परन्तु आपने इस कार्य का सम्पूर्ण बीड़ा उठाया है। यह ईश्वर की कृपा ही माननी चाहिये। आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि आपके इन शोध प्रयासों से अपने प्राचीन ऋषि-महर्षियों के ज्ञान से सम्पूर्ण विश्व आलोकित हो उठेगा।"

– माननीय श्री अशोकजी सिंघल
अन्तर्राष्ट्रिय अध्यक्ष, विश्व हिन्दू परिषद

आचार्य अग्निव्रतजी ने विज्ञान के इस क्षेत्र में कदम रखने का साहस किया है तथा भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिकों से संवाद किया है...यह बात ही अपने आप में प्रोत्साहनीय है। उन्होंने वैज्ञानिकों को चुनौती देकर उनके मध्य उपस्थिति अंकित करा ली है, यह भी कोई सामान्य बात नहीं है।

– प्रसिद्ध मनुस्मृति भाष्यकार मान्य डॉ. सुरेन्द्रकुमारजी
(सुधारक - सितम्बर २००८ सम्पादकीय)

।। ओ३म् ।।

महत्त्वाकांक्षी -

वेद विज्ञान अनुसंधान योजना

- आशा का नया सूर्योदय

श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास की स्थापना वैशाख अमावस्या वि. सं. २०६० तदनुसार ०१ मई २००३ को आर्य समाज के प्रख्यात लेखक व समीक्षक पूज्य श्री आचार्य अग्निव्रत जी नैष्ठिक ने भीनमाल, जिला जालोर (राज.) में की थी। किन्हीं कारणवश न्यास का मुख्यालय भीनमाल से अस्थायी रूपेण हटाकर पाली-मारवाड़ में एक किराये के मकान में करना पड़ा। वहाँ ग्यारह माह रहने के पश्चात् मुख्यालय भीनमाल में कर लिया। भीनमाल नगर के निकटस्थ ग्राम भागल-भीम से २ किमी. दूर रोड़ के किनारे सवा तीन बीघे भूमि क्रय कर ली। हमारे न्यास के पाँच उद्देश्य हैं। १. वेद रक्षा अभियान २. गो-कृषि-पर्यावरण रक्षा अभियान ३. राष्ट्ररक्षा अभियान ४. समाज सुधार अभियान ५. आर्य युवा निर्माण अभियान। न्यास प्रमुख आचार्य श्री को मुम्बई के अनेक उच्च क़ोटि के वैज्ञानिकों तथा न्यास के वर्तमान संरक्षक पूज्य आचार्य स्वदेशजी महाराज (मथुरा) के द्वारा दिये परामर्श पर तथा इस क्षेत्र में पूज्य आचार्य जी की प्रखर प्रतिभा एवं रूचि के कारण वर्तमान में हमारा न्यास सर्वाधिक महत्वपूर्ण वेद रक्षा अभियान के अन्तर्गत वेद तथा भौतिक विज्ञान पर शोध हेतु ही विशेषतया समर्पित है। यह कार्य सबसे महत्वपूर्ण तथा कठिन है। इस प्रकार का कार्य सम्भवतः भारत में अन्यत्र कहीं भी नहीं हो रहा है फिर विश्व में कहां हो सकता है ? इसके लिए सर्वप्रथम भवन बनाने की आवश्यकता होती है। वेद विज्ञान मन्दिर नाम से वेद-विज्ञान शोध संस्थान भागल भीम में निर्माणाधीन है, इसका कुल अनुमानित लागत ७३ लाख रूपया है। जिसमें शोध कक्ष, आवास कक्ष, यज्ञशाला, गोशाला, कर्मचारी आवास, अतिथिशाला, जल संरक्षण हेतु बड़े हौज आदि निर्माण, चारदीवारी, पुस्तकालय, कम्प्यूटर कक्ष सभा भवन आदि बनाने होंगे। विशिष्ठ अतिथि कक्ष व कार्यालय भवन जिसमें लगभग १२ लाख रूपया व्यय हुआ है, तो बन चुका है। अभी इसी में हमारा कार्य चल रहा है। इस समय पूज्य आचार्य श्री के अतिरिक्त तीन कार्यकर्ता (कार्यालय प्रमुख, प्रचारक, प्रचारक सहायक व सेवक) वेतन पर कार्यरत हैं। श्री आचार्यजी पूर्ण समर्पित व नैष्ठिक ब्रह्मचारी हैं व प्रबन्धक भी अवैतनिक है। एक भौतिक वैज्ञानिक डा. वसन्तजी मदनसुरे कभी-कभी यहाँ आते रहते हैं। वर्तमान में कुल खर्च लगभग ३०-३५ हजार मासिक चल रहा है। प्रयोगशाला की आवश्यकता को श्री आचार्यजी अनुभव नहीं करते। उन्होंने इस हेतु भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, मुम्बई के थ्यौरीटीकल एस्ट्रोफिजिक्स सैक्शन के हैड प्रसिद्ध वैज्ञानिक मान्यवर

डॉ. आभास कुमारजी मित्रा सेचर्चा की है। भविष्य में उनका विचार विश्व के अन्य वैज्ञानिकों से भी यही चर्चा करने का है कि वे अपने मस्तिष्क तथा वैदिक वाङ्मय से कुछ ऐसे रहस्यों को खोजकर दें जिस पर वे वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशालाओं में शोध करें। इससे उन वैज्ञानिकों को भी शोध हेतु नये - नये बिन्दु मिलेंगे तथा हमारे वेद विज्ञान की प्रमाणिकता को वैज्ञानिक जगत् स्वीकार करेगा। इसके उपरान्त विश्व का प्रबुद्ध वर्ग इसके प्रति आकृष्ट होगा।

उल्लेखनीय है कि आचार्य श्री द्वारा लिखित शोध पुस्तिका को विषय वस्तु पर भाभा परमाणु अनुसन्धान केन्द्र मुम्बई के अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के वैज्ञानिकों तक से आचार्य जी का लम्बासंवाद चलता रहा है। विशेष परिज्ञान "वैज्ञानिकों के बीच मेरे अनुभव" नामक लेख पढ़ने से हो गया होगा।

मान्यवर ! इस समय आचार्य जी अकेले ही वैदिक वाङ्मय, पाणिनी व्याकरण, निरूक्त आदि के साथ-साथ आधुनिक भौतिक विज्ञान आदि जो संसार का कठिनतम पाठ्यक्रम है, को स्वयं ही पढ़ रहे हैं। वर्तमान में हमारी आवश्यकतायें निम्नानुसार है (भवन की अनुमानित लागत के अतिरिक्त)

क्रमांक	विवरण	मासिक व्यय (न्यूनतम लगभग)
१.	२ सेवकों का वेतन	७,०००/-
२.	कार्यालय/पुस्तकालय प्रमुख	६,०००/-
३.	शोध सहायक उपाचार्य	८,०००/-
४.	विद्युत, जल, दूरभाष, इण्टरनेट व्यय	१०,०००/-
५.	अवैतनिक व्यवस्थापक साधु	/-
६.	प्रचारक	६,०००/-
७.	५-६ व्यक्तियों का भोजन, वस्त्र, चिकित्सा आदि व्यय	१२,०००/-
८.	यज्ञ व गो आदि का व्यय	५,०००/-
६.	पत्र, पत्रिकायें, स्टेशनरी आदि व्यय	१०,०००/-
	कुल मासिक व्यय लगभग	६४,०००/-

उपर्युक्त मासिक व्यय तुरन्त तो नहीं परन्तु धीरे-धीरे आवश्यक हो जायेगा। अभी तत्काल लगभग ४०,००० रूपये मासिक तथा कुछ भवन व पुस्तकालय हेतु वांछित राशि की विशेष आवश्यकता है। इस जिले में कुछ राष्ट्र विरोधी संगठन सक्रिय हैं, इस कारण जन जागरण हेतु वैदिक राष्ट्र रक्षा समिति का गठन इसी न्यास के

अन्तर्गत किया गया है । उसका व्यय भी न्यास को वहन करना पड़ता है ।हमारे कई न्यासी अपने सामर्थ्य से अधिक आर्थिक सहयोग कर रहे हैं परन्तु वे संख्या में बहुत कम हैं पूज्या माता प्रकाशदेवीजी एवं श्री बलबीरसिंहजी मलिक के प्रयास से आर्य समाज सैक्टर-७ (हरियाणा) मथुरा के दानवीर श्री चौधरी तोरनसिंहजी आर्य आदि का आर्थिक आधार व न्यास संरक्षक पूज्यपाद आचार्य स्वदेशजी महाराज का प्रोत्साहन न मिलता तो हमारे पूज्यपाद आचार्यजी का आगे बढ़ना सम्भव नहीं होता । अब हमारे न्यासी श्री पूनमचन्दजी नागर व श्री सुरेशचन्द्रजी अग्रवाल आर्य समाज, कांकरिया, अहमदाबाद व वहाँ के कुछ दानवीर तथा जोधपुर के श्री जयसिंहजी गहलोत, श्री किशनलालजी व श्री सोमेन्द्रजी आगे आ रहे हैं । प्रचारकों का वेतन कोलकाता के दानवीर उद्योगपति माननीय श्री दीनदयालजी गुप्त ने देने का वचन दिया है व सहयोग भेजना प्रारम्भ भी कर दिया है । परन्तु अभी भी हम विशेष आर्थिक संकट में हैं । कार्यालय व अतिथि कक्ष बनाने में ही हम पर विशेष आर्थिक भार आ पड़ा है । इसी में आवास का काम फिलहाल चल रहा है । पूज्य आचार्यजी प्रचारार्थ जा नहीं सकते हैं क्योंकि इससे अध्ययन बाधित होगा और बिना अध्ययन इतना बड़ा कार्य होना सम्भव नहीं है । अतः आचार्यजी को पूर्ण आर्थिक निश्चिन्तता अत्यावश्यक है । इसी में इसके लिये सभी वेदभक्तों (आर्यों व पौराणिकों), विज्ञान-प्रेमियों, भारतीय संस्कृति पर गर्व करने वाले तथा मानव मात्र के हित चिन्तकों से विनम्र प्रार्थना है कि वे इस महान् कार्य में उदार हृदय से तन-मन-ध
ान से सहयोग करने का अनुग्रह करें व करावें । आपका यह धन इस अतीत पावन ज्ञान-विज्ञान - यज्ञ में ही आहुत होगा जिसमें आचार्य जी ने अपने को सर्वात्मना आहुत कर दिया है अधिक जानकारी हेतु इसका प्रथम लेख पढ़ने का कष्ट करें ।

हमारे धनी-मानी महानुभाव ! जब किसी महान् व्रती ने वेद रक्षा को ही अपना जीवन व्रत बनाया है तब आप हम व सबको कम से कम धन की कमी को तो बाधा नहीं बनने देना चाहिये। हम धन दान का व्रत तो लें ही । किन्तु उन लोगों से हमारा विनम्र अनुरोध है, जिनकी आजीविका अण्डा, माँस, तम्बाकू, गुटखा, सिगरेट, बीड़ी, शराब, तस्करी, वैश्यालय, कत्लखाने आदि अनैतिक साधनों से है, उनसे हम धन लेना स्वीकार नहीं कर सकेंगे । सुपात्र दानी महानुभाव आप हमारे यज्ञ में निम्न प्रकार से सहयोगी बन सकते हैं ।

१. प्रतिवर्ष न्यूनतम १२,०००/- रूपये अथवा एक बार न्यूनतम एक लाख रूपये का दान करके सहयोगी संरक्षक बन सकते हैं । सभी सहयोगी संरक्षकों को न्यास की वार्षिक बैठक जो प्रायः वार्षिकोत्सव के अवसर पर हुआ करेगी, में विशेष रूपेण आमन्त्रित किया जायेगा । तथा उत्सव में अभिनन्दित किया जाया करेगा। इसके साथ इनका नाम न्यास की विज्ञप्ति तथा वेब साइट में प्रविष्ट होगा ।

२. प्रतिवर्ष न्यूनतम ६,०००/- रूपये अथवा एक साथ न्यूनतम ५०,०००/- रूपये देकर विशेष आमन्त्रित सदस्य बन सकते हैं । इनको भी वार्षिकोत्सव के अवसर पर विशेष रूपेण आमन्त्रित किया जाता रहेगा ।

३. वार्षिक न्यूनतम १,०००/- रूपये देते रहकर सहयोगी सदस्य बन सकते हैं ।
४. अपने नाम से कमरा, यज्ञशाला आदि बनवा सकते हैं । इनका भी वार्षिकोत्सवों पर विशेष सम्मान किया जायेगा ।
५. आप न्यास के नाम किसी की स्मृति में अथवा यों ही कोई स्थिर निधि बना सकते हैं, जिसके ब्याज का उपयोग न्यास कार्य में होता रहे ।

उपर्युक्त चारों प्रकार के सहयोगी महानुभावों तथा अन्य दानदाताओं की इच्छा पर न्यास द्वारा प्रकाशित साहित्य निःशुल्क भेंट किया जाता रहेगा। जो महानुभाव स्वयं दान नहीं कर सकें, वे दूसरों को प्रेरित करके कम से कम ८ सदस्य आदि बनाकर स्वयं निःशुल्क उसी श्रेणी के सदस्य या सहयोगी संरक्षक आदि बन सकते हैं ।

६. विद्यार्थी, किसान, श्रमिक आदि अपनी पवित्र आहुति श्रद्धा व सामर्थ्य के अनुसार दे सकते हैं। आई. आई. टी. इंजीनियरिंग व विज्ञान के उच्चतर कक्षाओं के छात्र अपना बौद्धिक सहयोग कर सकते हैं । ७. वयोवृद्ध विद्वान् व संन्यासी एवं महान् वैज्ञानिक महानुभाव अपना आशीर्वाद रूपी सहयोग करने की कृपा कर सकते हैं ।कृपया आप अपना चैक/ड्राफ्ट/धनादेश, प्रमुख, श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास, के नाम (केवल खाते में देय) भेजने का कष्ट करें । न्यास को दिया गया दान आयकर अधिनियम की धारा ८० के अन्तर्गत छूट प्राप्त है । पंजाब नेशनल बैंक के खाता संख्या ४४७४०००१००००५८४६ में ऑन लाइन आप धन जमा करवा सकते हैं परन्तु इसकी सूचना तुरन्त हमें फोन द्वारा अवश्य देने की कृपा करें ।

श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास, वेद विज्ञान मन्दिर, भागल-भीम

वाया—भीनमाल, जिला जालोर (राजस्थान) पिन 343029

-: न्यास के आधार :-

१. संरक्षक-पूज्य आचार्य स्वदेशजी महाराज, वेद मन्दिर, मथुरा
२. सह संरक्षक पुज्य आचार्य राजसिंहजी आर्य, दिल्ली
३. संस्थापक-आजीवन-प्रमुख एवं आचार्य-पूज्य आचार्य अग्निव्रतजी नैष्ठिक
४. मानद सहयोगी संरक्षकगण :-
(क) मा. श्रीमान् अर्जुनसिंहजी देवड़ा विधायक (रानीवाड़ा) एवं उपाध्यक्ष बीसूका क्रियान्वयन समिति, राजस्थान सरकार, जयपुर
(ख) मा. श्रीमान् डॉ. समरजीतसिंहजी, विधायक, भीनमाल
(ग) मा. श्रीमान् गोपालसिंहजी, कोरी
(घ) मा. श्रीमान् जोगेश्वरजी गर्ग, विधायक, जालोर

(ङ) मा. श्रीमान् नारायणसिंहजी देवल, पूर्व जिला प्रमुख, जालोर

(च) मा. श्रीमान् जीवारामजी चौधरी, विधायक, सांचोर

(छ) मा. श्रीमान् भवानीसिंहजी, बाकरा

(ज) मा. श्रीमान् एडवोकेट ठाकरारामजी चौधरी, पूर्व जिला प्रमुख, जालोर

५. सहयोगी संरक्षकगण :-

(क) श्रीमान् चौधरी तोरनसिंहजी आर्य, मथुरा

(ख) श्रीमान् सत्यपालजी आर्य, भटिण्डा

(ग) श्रीमान् रघुवीरसिंहजी चौधरी (आर्य), मथुरा - २००६ तक

घ-माता उर्मिला जी राजोत्या अजमेर

ङ-श्रीमान् अनिल जी आर्य फरीदाबाद

-: कार्यकारिणी सदस्य (न्यासी मण्डल) :-

१. श्रीमान् आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक, वेद विज्ञान मन्दिर, भागलभीम ।

२. श्री ऊकसिंह चौहान, झाब, जालोर ।

३. श्री अभिषेक आर्य, निम्बावास, जालोर ।

४. श्री जनकसिंह चम्पावत, जेरण, जालोर ।

५. श्री डॉ. पदमसिंह चौहान, कुशलापुरा, जालोर ।

६. श्री धीराराम चौधरी, विशाला, जालोर ।

७. श्री रमेश सुथार, खाण्डादेवल, जालोर

८. श्रीमती माता प्रकाशदेवी, फरीदाबाद (हरियाणा)

९. श्री बलवीरसिंह मलिक, फरीदाबाद (हरियाणा)

१०. श्री ब्र. नरेन्द्र जिज्ञासु, आजमगढ़ (उ. प्र.) ।

११. श्री पूनमचन्द नागर, अहमदाबाद ।

१२. श्री सुरेशचन्द्र वंशीधरजी अग्रवाल, अहमदाबाद ।

१३. श्री जयसिंह गहलोत, जोधपुर ।

१४. श्री किशनलाल गहलोत, जोधपुर ।

१५. श्री सोमेन्द्रसिंह गहलोत, जोधपुर ।

१६. श्री मनोहरलाल आनन्द, फरीदाबाद (हरियाणा) ।

१७. श्री भुवनेश काबरा, पाली ।

१८. श्री नटवर नागर, सुमेरपुर (पाली)

१९. ~~सुश्री ब्र. इन्दुबाला आर्या, हरिद्वार (उत्तरांचल)~~ श्री सेठ दीनदयाल जी गुप्त कोलकाता

२०. श्री जितेन्द्रसिंह सिसोदिया, कुचामन सिटी, नागौर ।

२१. श्री राजेन्द्रसिंह सोढ़ा, तातोल, जालोर ।

२२. श्री मूलसिंह चौहान, चौरा, जालोर ।

२३. श्री महेन्द्रसिंह चम्पावत, जेरण, जालोर ।

२४. श्री हुकुमसिंह देवड़ा, सुरावा, जालोर ।

२५. श्री विक्रमसिंह राव, लेटा, जालोर ।

२६. श्री पं. विपिन बिहारी आर्य (न्यासी), मथुरा (उ. प्र.) ।

२७. श्री कमलेश रावल, सुमेरपुर, पाली ।

२८. श्री रामनिवास जांगिड़, पाली ।

२९. श्री रघुवीरसिंह चौधरी, मथुरा (उ. प्र.) ।

३०. श्री चन्द्रशेखर लाहोटी, कड़ैल, अजमेर ।

३१. श्री महेश बागड़ी, पाली ।

३२. श्री नरसिंह आर्य, पाली ।

३३. श्री मोक्षराज आर्य, अजमेर ।

३४. श्री मांगीलाल सोनी, भीनमाल ।

-: मानचित्र :-

PLAN OF LAND FOR PPOPOSED श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास
B/T ROAD BHINMAL TO PUNASA
625'
TO PUNASA 17KM
TO BHINMAL 6KM
AGRICULTURE FIELDS
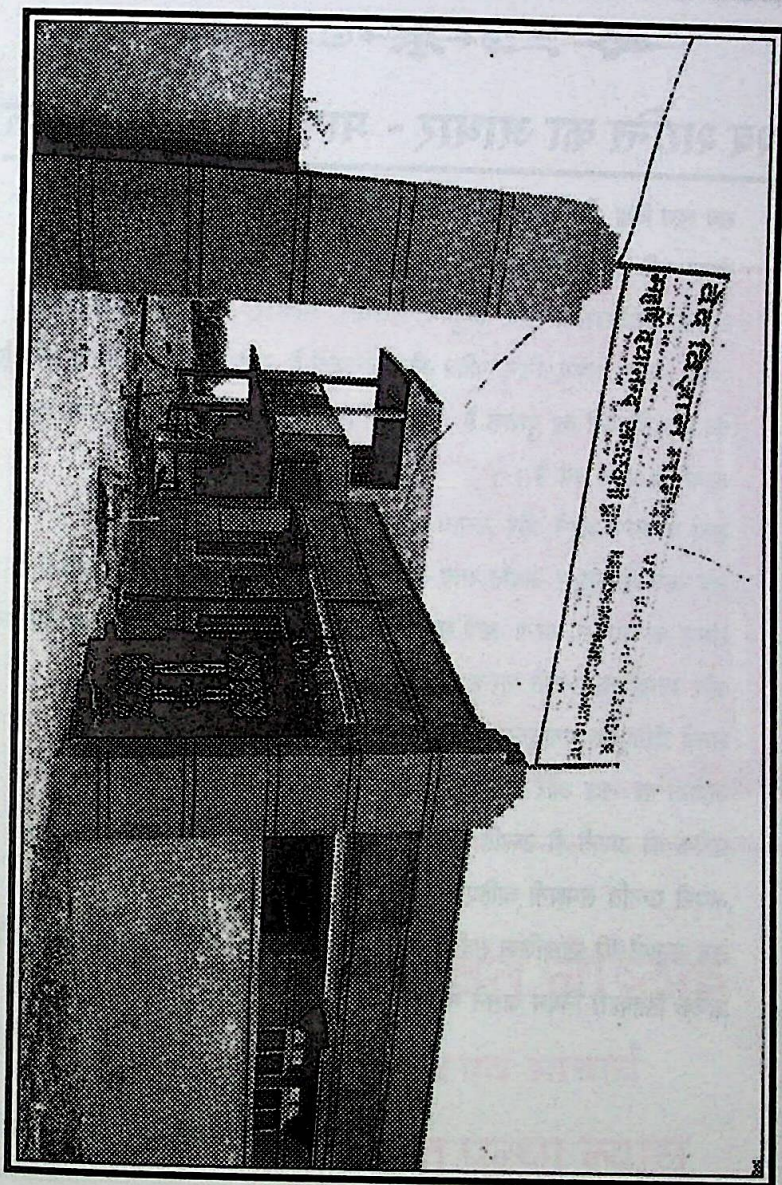
वर्तमान में निर्मित भवन

विश्व शान्ति का आधार - मानव धर्म-सूत्र दशक

१. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

२. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकर, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।

३. वेद सब विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिये।

६. संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७. सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य बर्तना चाहिये।

८. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

९. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

१०. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र रहें।

प्रणेता-महर्षि दयानन्द सरस्वती
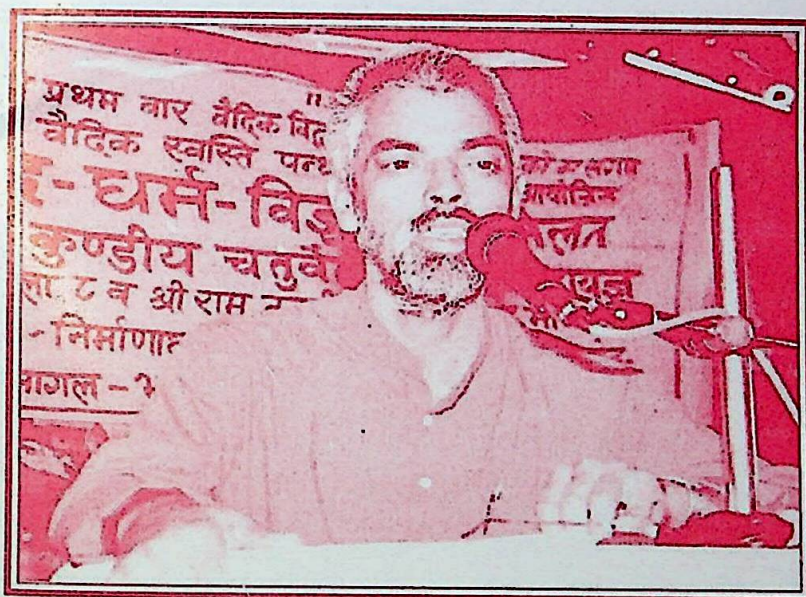
आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

संस्थापक, प्रमुख एवं आचार्य

श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास

वेद विज्ञान मन्दिर

महर्षि दयानन्द सरस्वती

सर अल्बर्ट आइन्स्टीन

चामुण्ड प्रिण्टर्स, भीनमाल फोन 220104